वनस्पति वाणी

वर्ष : 2 सितम्बर, 1991 अंक : 2

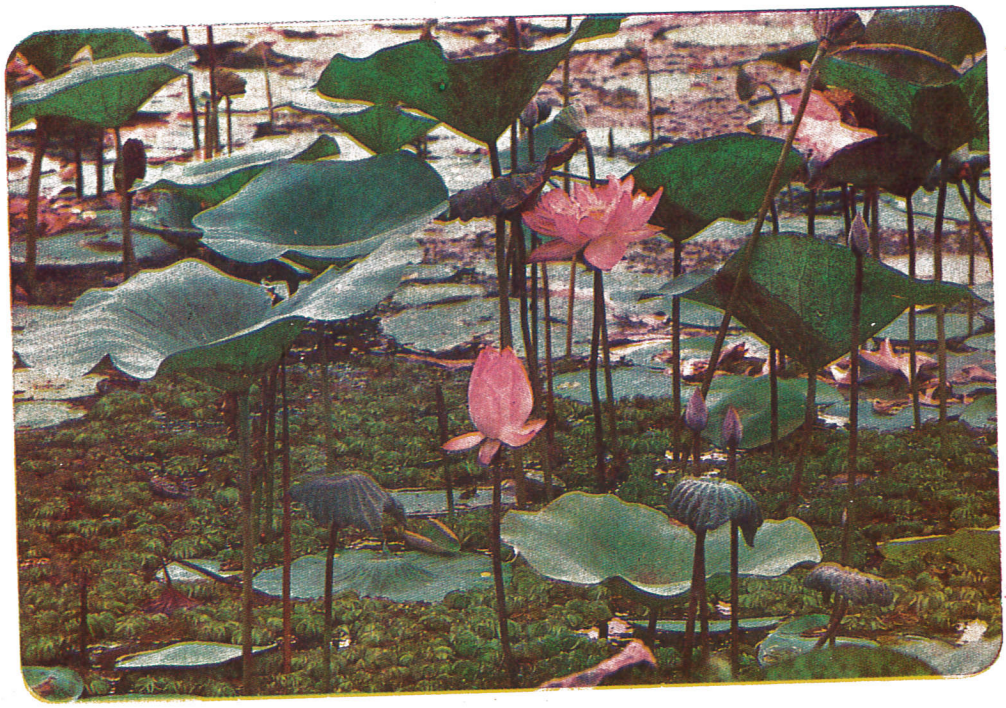

भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण
BOTANICAL SURVEY OF INDIA

भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण

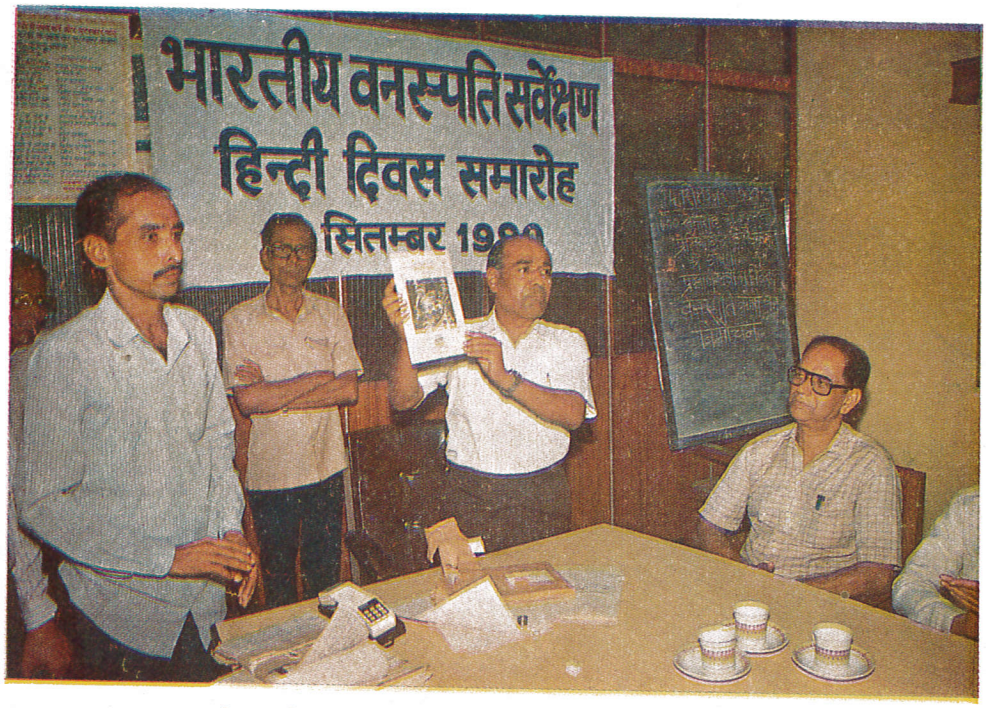

'वनस्पति वाणी' के प्रवेशांक का 14 सितम्बर 1990 को मुख्यालय में डा० आर० आर० राव विमोचन करते हुए।

'हिन्दी दिवस' (14 सितम्बर 1990) समारोह का एक दृश्य

वनस्पति वाणी

वर्ष : 2 सितम्बर, 1991 अंक : 2

भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण
BOTANICAL SURVEY OF INDIA

भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण

मुखपृष्ठ का चित्र : भारतीय वनस्पति उद्यान, हावड़ा स्थित सरोवर में खिले हुए कमल (नीलम्बो न्यूसीफेरा) के फूल।

सम्पादक मण्डल

डा० बी० डी० शर्मा	प्रधान सम्पादक
डा० आर० के० चक्रवर्ती	सदस्य
डा० बी० मुद्गल	सदस्य
श्री ए० आर० के० शास्त्री	सदस्य
डा० एस० एल० गुप्त	सदस्य

सम्पादन सहायक :

श्री नवीन चौधरी

वनस्पति वाणी में प्रकाशित लेखों की मौलिकता एवं प्रामाणिकता तथा व्यक्त विचारों के लिए लेखक उत्तरदायी हैं।

विषय-क्रम

पेड़ पौधों से पेट्रोल, भविष्य का विकल्प : बी. डी. शर्मा एवं एस. एल. गुप्त 5

जॉब चार्नक एवं सम्बन्धित वृक्ष : रथीन कुमार चक्रवर्ती 7

सिक्किम के वृक्ष : सर्वेश कुमार 9

चरक उद्यान : अरूप बनर्जी एवं रथीन कुमार चक्रवर्ती 12

विरवे लगा के देखें : भगवती प्रसाद उनियाल 15

आत्मदहनकारी वेणु : हरीशंकर पाण्डेय, अरुप बनर्जी एवं रथीन कुमार चक्रवर्ती 16

कच्छ वनस्पति (मैन्ग्रोव) : लुप्त होता स्रोत : एस. एल. गुप्त एवं ए. आर. के. शास्त्री 19

सिक्किम पर्यटक के दृष्टिकोण से : विजय कृष्ण 23

हमारे राष्ट्रीय और राजकीय वृक्ष एवं पुष्प : बी. डी. शर्मा, डी. सी. एस. राजू एवं आर. सी. श्रीवास्तव 25

गुजरात व राजस्थान के संकटग्रस्त पौधे : महेश जयंतीलाल कोठारी 29

पर्यावरण प्रदूषण : आनन्द कुमार 32

विज्ञान और मानवीय मूल्य : नवीन चौधरी 34

समाचार 35

भूमिरापोनलोवायुः खं मनो बुद्धिरेव च।
अहंकार इतीयं मे भिन्ना प्रकृतिरष्टधा।४।
अपरेयमितस्त्वन्यां प्रकृतिं विद्धि मे पराम्।
जीवभूतां महाबाहो ययेदं धार्यते जगत्।५।

(श्रीमद्भागवद्गीता : अध्याय सात)

पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश, मन, बुद्धि और अहंकार—यह आठ प्रकार से विभाजित मेरी प्रकृति है। अपरा अर्थात् जड़ प्रकृति है। जिससे यह सम्पूर्ण जगत धारण किया जाता है वह जीव रूप परा प्रकृति अर्थात् चेतन प्रकृति है।

पेड़-पौधों से पेट्रोल : भविष्य का विकल्प

बी० डी० शर्मा एवं एस० एल० गुप्त

वह दिन दूर नहीं जब पेट्रोल का वर्तमान भण्डार खत्म हो जायेगा और पेट्रोल जैसे ईंधन के अन्य विकल्पों की उपयोगिता बढ़ जायेगी। खाड़ी-युद्ध के दौरान यह बात स्पष्ट रूप से उभर कर सामने आई है कि पेट्रोल पर पूरी तरह निर्भर रहना वर्तमान परिस्थिति में किसी भी तरह से उचित नहीं होगा। इस युद्ध-संकट के दौरान लोगों को पेट्रोल का महत्व समझ में आने लगा है और वे लोग भी जो 'पेट्रोल खत्म हो रहा है' को महज खोखला प्रचार समझते थे, इसके महत्व और अन्य विकल्पों जैसे पेड़-पौधों पर शोध के महत्व को समझने लगे हैं। वैज्ञानिक समुदाय तो पेट्रोल के खत्म होने वाले आशंका से ही परिचित होने के कारण उसके अन्य विकल्पों पर पिछले दशकों से ही नजर जमाए हुए हैं और उनकी कोशिश का ही परिणाम है कि पेड़-पौधों से पेट्रोल के विकल्प की आशा बँधी है। हालांकि इस बात पर विश्वभर में विचार जारी है कि क्या पेड़-पौधों से पेट्रोल प्राप्त करना आर्थिक रूप से उपयोगी रहेगा और यदि हाँ तो किस कीमत पर। यह सर्वविदित सत्य है कि किसी भी विकासशील देश की आर्थिक परिस्थिति को सुधारने के लिये पेट्रोल पर होने वाले भुगतान व्यय को कम करना जरूरी है। साथ ही उस देश के भौगोलिक परिस्थिति के अनुसार कम लागत वाले पेट्रोल के अन्य विकल्पों पर शोध करना भी जरूरी है। भारत जैसे विकासशील देश के लिए जहाँ मानवश्रम प्रचुर मात्रा में उपलब्ध है, पेट्रोलयुक्त पेड़-पौधों का रोपण पर्यावरण को ध्यान में रखते हुए काफी बड़े पैमाने पर किया जा सकता है।

इस दिशा में विश्व में सम्भवतः प्रथम प्रयास दूसरे विश्व-युद्ध के दौरान प्रारम्भ हुआ परन्तु ठोस परिणाम की तरफ कदम आठवें दशक के दौरान नोबेल पुरस्कार से सम्मानित अमेरिकी वैज्ञानिक डा० एम० केल्विन ने बढ़ाया। केल्विन के अनुसार पादप जगत के यूफोर्बिएसी, एसक्लेपिएडेसी और एपोसायनेसी कुल के पौधों से पेट्रोल जैसा रसायन 'हाइड्रोकार्बन' प्राप्त किया जा सकता है। यह 'हाइड्रोकार्बन' इन पौधों के दूध (लैटेक्स या रेसिन) में मौजूद होता है। इन कुलों के 'हाइड्रोकार्बन' युक्त पौधों की सूची तालिका १ में दी गई है :—

तालिका १ : 'हाइड्रोकार्बन' युक्त पौधे

कुल का नाम	पौधों का नाम
यूफोर्बिएसी	यूफोर्बिया लेथिरस, यूफोर्बिया तिरुकैली, यूफोर्बिया नेरीफोलिया, यूफोर्बिया केडुसीफोलिया
एसक्लेपिएडेसी	कैलोट्रापिस प्रोसेरा

लखनऊ स्थित राष्ट्रीय वनस्पति अनुसंधान संस्थान (एन. बी. आर. आई.) इस दिशा में काफी प्रयासरत हैं और वहाँ अब तक कई पौधे इस हेतु छाँटे जा चुके हैं। इसके अलावा भारतीय पेट्रोलियम संस्थान, देहरादून में पौधों के लैटेक्स की 'प्रोसेसिंग' की जा रही है और परीक्षण के तौर पर 'प्रोसेसिंग' के बाद पेट्रोल भी प्राप्त की जा चुकी है। ऊपर वर्णित पौधों के अलावा कुछ ऐसे भी पौधे हैं जिनमें "प्रोसेसिंग" की आवश्यकता नहीं पड़ती है और जिनके तेल को सीधे ही डीजल इञ्जन में ईंधन के तौर

पर इस्तेमाल किया जा सकता है। ब्राजील में पाये जाने वाले इन पौधों में प्रमुख हैं :—**कोपेफेरा लैड्सडोरफी** और **कोपेफेरा मल्टीजुगा**। इन प्रजातियों के एक वृक्ष से दो या तीन घण्टे में लगभग 20 से 30 लीटर तेल प्राप्त किया जा सकता है। इसके अलावा ईंधन के कई गुणों से युक्त "पेट्रोलियम नट" के नाम से मशहूर **पिटोस्पोरम रेसिनीफेरम** वृक्ष के फलों से निकलने वाले तेल में पेट्रोलियम जैसा गंध होता है।

परन्तु इन सब प्रयासों का लाभ तभी मिल सकता है जब पेड़-पौधों से प्राप्त पेट्रोल की उत्पादन लागत काफी कम हो। उदाहरण के लिये केल्विन के अनुसार **यूफोर्बिया लेथिरस** से पेट्रोल की "प्रोसेसिंग" की कीमत लगभग 60 डालर प्रति बैरल पड़ता है। यह तभी व्यावहारिक होगा जब खुले बाजार में पेट्रोल की कीमत इससे अधिक हो जाये या बड़े पैमाने पर तेल का उत्पादन करवाया जाये क्योंकि एक लाख बैरल प्रतिदिन तेल तैयार करवाने पर यह लागत घटकर एक चौथाई रह जायेगा। परन्तु व्यावहारिक रूप से यह तभी सम्भव होगा जब बड़े पैमाने पर इस प्रजाति के वृक्षों को लगाया जाये। हालांकि हमारे देश में ऐसे पेड़-पौधों को उगाने की कमी नहीं है फिर भी पर्यावरण संतुलन की समस्या इन पेड़ों के काटने पर अवश्य उठेगी।

अब आइये पेड़-पौधों से प्राप्त दूसरे विकल्प एल्कोहल पर जिससे सबसे ज्यादा आशा बंधी है और जिस पर आठवें दशक के प्रारम्भ से ही लगातार परीक्षण हो रहे हैं। हालांकि एल्कोहल से चलने वाले इन्जन बनाए जा चुके हैं तथा उद्योग के क्षेत्र में उपकरण यन्त्रों की डिजाइन में थोड़ा बहुत परिवर्तन करके एल्कोहल को ईंधन की तरह प्रयुक्त किया जा सकता है, फिर भी आर्थिक रूप से एल्कोहल पेट्रोल के पीछे ही है। जैसा कि हम जानते हैं—दो तरह के एल्कोहल परीक्षण किए जा रहे हैं—इथेनाल या एथिल एल्कोहल और मिथेनाल या मेथिल एल्कोहल। परीक्षणों से यह सिद्ध हो चुका है कि इथेनाल पेट्रोल, केरोसिन और ईंधन तीनों की जगह ले सकता है और इसके प्रयोग से प्रदूषण भी कम होता है। पेड़ों से बड़े पैमाने पर इथेनाल उत्पादन की सम्भावनाएं काफी है। सं०रा० अमेरिका में इथेनाल मक्का की फसल से तैयार किया जाता है जबकि भारत में गन्ना इस्तेमाल किया जाता है। लेकिन वृहद स्तर पर इथेनाल उत्पादन की दशा में केवल एक प्रकार के फसल पर निर्भर रहना प्रयोगात्मक दृष्टि से व्यावहारिक नहीं हैं इसलिए तरह-तरह के पेड़ों की लकड़ी के प्रयोग के साथ-साथ लकड़ी के सेलुलोज के विघटन हेतु विभिन्न एंजाइमों पर भी परीक्षण चल रहा है क्योंकि इससे इथेनाल का उत्पादन बढ़ने के साथ-साथ उत्पादन लागत में भी कमी होगी। पर्यावरण सन्तुलन के पक्ष को नजर रखते हुए पेड़ों के काटने के साथ-साथ इन वृक्षों को फसलों की तरह वर्ष में दो या तीन बार उगाते भी रहा जाय तो कार्बन-डाइ-आक्साइड का सन्तुलन भी बना रहेगा। भारत में गन्ना के अलावा अन्य फसलों में चुकन्दर और मीठे ज्वार पर परीक्षण चल रहा है। एक अनुमान के अनुसार मीठे ज्वार से उत्पादित इथेनाल की कीमत तीन रुपये प्रति लीटर के आसपास होगी। चुकन्दर को उत्तर प्रदेश और बिहार के गंगीय मैदानों के अलावा देश के उन लवणीय भूमि में भी उगाया जा सकता है, जहाँ पर अन्य फसलों के उगने में काफी मुश्किलों का सामना करना पड़ता है।

वर्तमान में इथेनाल उत्पादन लागत अधिक होने के विपरीत मीथेनाल लगभग पेट्रोल के मूल्य पर तैयार हो जाता है परन्तु इससे होने वाले प्रदूषण को लेकर काफी समस्याएं हैं क्योंकि पेट्रोल की अपेक्षा मिथेनाल से दुगुनी फार्मेल्डिहाइड गैस निकलती है जो कैंसर पैदा करती है। परन्तु इस समस्या पर नियन्त्रण पाया जा सकता है क्योंकि मिथेनाल से पेट्रोल की तुलना में अन्य कैंसरकारी पदार्थ कहीं कम मात्रा में निकलते हैं, ऐसा अमेरिका की पर्यावरण संरक्षण समिति (एनवायरमेंट प्रोटेक्शन एजेंसी) का मानना है।

इस परिप्रेक्ष्य में पेड़-पौधों से पेट्रोल प्राप्त करने की दिशा में और अधिक शोध की जरूरत है जिससे पर्यावरण संरक्षण के साथ-साथ देश की आर्थिक स्थिति को भी मजबूत की जा सके।

जॉब चार्नक एवं उनसे सम्बन्धित वृक्ष

रथीन कुमार चक्रवर्ती

कलकत्ता जॉब चार्नक की स्वप्न नगरी है। आज से 302 साल पूर्व भाद्र पद महीने के एक बादल-घने दिन में अंग्रेज बनिक जॉब चार्नक ने 24 अगस्त 1690 में इस महानगरी की स्थापना की। जॉब चार्नक ने हुगली नदी के पूर्वी तट पर वाणिज्य पोत एवं जहाज सूतानुटी नामक एक ग्राम में लगाया। सूतानुटी तथा निकटवर्ती और दो ग्राम गोविन्दपुर एवं कलकुट्टा मिलाकर आज का कलकत्ता महानगरी बना। उन दिनों ये जगह नदी के लवनाक्त पानी से वर्ष के कई महीने तक भरा रहता था। इन जगहों में उपयोगी वृक्षों और पौधों का जंगल था जैसे सुन्दरी (*Heritiera fomes* Buch.-Ham,), बोना (*Avicennia alba* Bl.), बैन (*A. officinalis* L.), गर्जन (*Rhizophora mucronata* Lamk.), गरिया (*Kandelia candel* (L.) Drucc.), गोराला, गोलपाती (*Nypa fruticans* Wurumb), हुलासी (*Aegiceras corniculatum* (L.) Bl.), हुगला (*Typha australis* Schum. & Thonn.), ताल (*Borassus flabellifer* L.), हेन्ताल (*Phoenix paludosa* Roxb.), झारकुछकाँटा, हारगोजा (*Acanthees ilicifolius* L,), काँकरा (*Bruguiera gymnorrhiza* (L.) Sav,), केवड़ा (*Sonneratia apelata* Buch. Ham,), हाराधानी (*Porteresia coarctata* (Roxb,) Tatcoka) आदि।

इन जंगली पौधों के अलावा अनेकों वन्य जन्तु जैसे समुद्री कछुआ, घड़ियाल, मगर, एवं विषधर सर्प का आवास स्थान था। इन सब असुविधाओं के रहते हुए चार्नक साहब ने वासस्थान एवं वाणिज्य के लिए यह स्थान क्यों चुना, इसका उत्तर देना आसान नहीं है। चार्नक साहब के द्वारा लिखित कोई विवरण या आत्म-जीवनी भी नहीं है जिसमें स्थान चुनाव के सम्बन्ध में कुछ प्रमाण मिल सके। इसके लिए हमें इतिहास पर निर्भर करना होगा। इतिहास पुराने सभ्यता, संस्कृति, जीवन-धारा और व्यक्तित्व का धारक एवं वाहक है। कलकत्ता महानगरी के इतिहास का विश्लेषण करके यह निश्चित किया गया है कि कलकत्ता की स्थापना के समय जॉब चार्नक किसी एक वृक्ष के द्वारा प्रभावित हुए थे जो स्थान चुनाव के कई कारणों में से एक था। अब प्रश्न यह है कि यह वृक्ष कौन था, कहाँ था एवं देखने में कैसा था—इन बातों को लेकर अनेक कहानियाँ एवं मतभेद हैं।

आइये हमलोग इस वृक्ष की चर्चा करें। सुतानुटी डायरी तथा विशिष्ट स्काटिश पर्यटक अलेक्जेण्डर हैमिलटन के ग्रन्थ से मालूम होता है कि वर्तमान सियालदह के पास बऊ-बाजार एवं आचार्य प्रफुल्ल चन्द्र रोड के संयोग स्थल में एक विशाल पीपल का पेड़ था जिसके नीचे आम जनता बैठक एवं व्यापार सम्बन्धी बातचीत करती थी। जॉब चार्नक भी रोज इस पेड़ के नीचे बैठकर हुक्का पीते एवं व्यापारियों के साथ सौदा करते थे। जेम्स लांग के अनुसार इस पेड़ के लिए इस जगह का नाम बैठकखाना हुआ। यह जगह जंगली पौधों से भरा था। पारी चन्द मित्रा ने अपनी पुस्तक "आलालेर घरे दुलाल" में इस पीपल वृक्ष का विवरण दिया है। राजा विनय कृष्ण देव ने भी इन तत्वों का समर्थन किया एवं यह भी निश्चित किया है कि

भारत में ब्रिटिश साम्राज्य की स्थापना का बीज इसी वृक्ष के नीचे बोया गया। एच० ई० ए० कॉटन ने भी अपनी पुस्तक में इस पीपल वृक्ष का उल्लेख करते लिखा है कि अंग्रेज बनिया लोग इसी पीपल के नीचे इकट्ठा होते तथा सामग्रियों को लेकर एक साथ प्रस्थान करते थे जिससे डाकू वगैरह हमला न कर सके। मारकोयस हेस्टिंग ने शहर के विकास हेतु सन् 1820 में इस पेड़ को काट डाला जिसको लेकर आम जनता ने काफी शोर मचाया था।

फादर होस्टेन के अनुसार बैठकखाना के पीपल वृक्ष से चार्नक के जीवन का कोई सम्बन्ध नहीं था क्योंकि हुगली नदी के किनारे से बैठकखाना तथा सियालदह के रास्ते की दूरी बहुत थी, अतः चार्नक साहब इतना दूर रोज आते-जाते थे, अविश्वसनीय है। लेकिन उनका जीवन एक दूसरे लालदिघी के पास कब्रस्थान (संत जॉन चर्चयार्ड) में एक इमली के वृक्ष से जुड़ा था। यह वृक्ष इतना सुन्दर एवं मनोरम था कि उसकी प्रशंसा सन् 1709 में लन्दन के निवासियों के मुँह से सुनी जाती थी। यह कब्रस्थान चार्नक साहब के घर के नजदीक था। लेकिन इन धारणाओं को बाद के इतिहासकारों ने स्वीकार नहीं किया। 10 जनवरी 1693 में जॉब चार्नक के देहान्त के बाद उन्हें इस इमली वृक्ष के पास ही दफना दिया गया। इस आधार पर परम्परागत यह विश्वास है कि उनका इस पेड़ से प्रेम तथा सम्बन्ध था।

राधारमण मित्रा ने अपनी सुप्रसिद्ध पुस्तक "कलकत्ता दर्पण" में लिखा है कि जॉब चार्नक के जीवन से इन तीन पेड़ों में से किसी एक का सम्बन्ध था—(i) बैठकखाना का पीपल वृक्ष (ii) बड़तल्ला का बरगद या (iii) नीमतल्ला का नीम का पेड़। उन्होंने इमली वृक्ष के धारणा को बेबुनियाद बताया है।

उपरोक्त दो पौधों के आलोचना के उपरान्त अब बाकी दो की चर्चा करनी है। कलकत्ता के बारे में लेख लिखने वालों का कहना है कि उत्तरी कलकत्ता के चित्तपुर रोड पर एक विशाल वट-वृक्ष था जो सुतानुटी गाँव से भी नजदीक था। जॉब चार्नक इसी वट-वृक्ष के नीचे हुक्का पीते थे और लोगों से बातचीत करते थे, लेकिन इसका भी कोईसही प्रमाण नहीं मिलता।

आधुनिक इतिहासकारों की धारणा है कि जॉब चार्नक नीमतल्ला के नीम पेड़ के नीचे बैठते थे और यह उनका प्रिय वृक्ष था। जॉब चार्नक का जहाज 24 अगस्त 1690 में जब हुगली नदी के सांकराइल में आया तो उन्होंने कैप्टन ब्रुक को नीम के पेड़ की ओर लंगर फेकने को कहा। यह नीम का वृक्ष उन दिनों स्थान को चिन्हित करने में मदद करता था। आनन्दमयी कालीबाड़ी के निकट स्थित यह वृक्ष सन् 1879 में आग लगने के कारण खत्म हो गया।

उपरोक्त चार वृक्षों में कौन सा जॉब चार्नक का प्रिय वृक्ष था, आज भी अनजाना रह गया है। शायद महानगरी के तीन सौ साल के लम्बे इतिहास के नीम, बरगद, इमली और पीपल के वृक्षों की कहानी खो गई है। लेकिन, जो कुछ भी हो, कलकत्तावासियों के मन से जॉब चार्नक का नाम कभी भी नहीं खोयेगा।

★

सिक्किम के वृक्ष

सर्वेश कुमार

सिक्किम हमारे देश का सबसे छोटा किन्तु प्राकृतिक सौन्दर्य से भरपूर प्रदेश है। यहाँ की हिमाच्छादित पर्वत शृङ्खलाएँ, झरने व झीलें तथा रंग-बिरंगे फूलों भरी घाटियाँ हर आने वाले को बरबस ही आकर्षित करती हैं। कंचनजंघा की बर्फ से ढकी पहाड़ियाँ सूर्योदय के समय जो दृश्य उपस्थित करती हैं वह चिरस्मरणीय बन जाता है।

वानस्पतिक विविधता :

यहाँ की पर्वत शृङ्खलाओं में केवल कुछ दूरी के अन्तर पर ही परिवर्तन आ जाता है। थोड़ी ही देर में आप 1500 मीटर से 3000 मीटर ऊँची पहाड़ियों पर होते हैं जहाँ एकदम भिन्न जलवायु होती है। यही कारण है कि यहाँ की वनस्पति में भी काफी विविधता मिलती है। एक अनुमान के अनुसार यहाँ पुष्पीय पौधों की लगभग 5000 जातियाँ मिलती हैं जो हमारे देश में पाई जाने वाली सम्पूर्ण वनस्पति जातियों का लगभग एक तिहाई है। इतने कम क्षेत्रफल में इतनी अधिक वानस्पतिक विविधता विश्व में केवल कुछ ही स्थानों पर दिखाई देती है।

वनीकृत भूमि : सिक्किम में वनीकृत भूमि का प्रतिशत भी देश के अन्य प्रदेशों की तुलना में अधिक है। यहाँ लगभग 40% भूमि वनों से आच्छादित है जबकि देश का औसत मात्र 18-19 प्रतिशत ही है। यहाँ की जलवायु में भिन्नता के कारण यहाँ लगभग सभी प्रकार के वन पाये जाते हैं। उष्णकटिबन्धीय वन तराई व निम्न ऊँचाई वाले क्षेत्रों में मिलते हैं तो शीतोष्ण व हिमाद्रि वन क्रमशः अधिक ऊँचाई पर मिलते हैं। यहाँ वृक्षों की 200-250 जातियाँ मिलती हैं। यहाँ कुछ उपयोगी, सुन्दर व रोचक वृक्षों का विवरण प्रस्तुत किया जा रहा है।

1. **रोडोडैन्ड्रॉन :** सिक्किम में पाये जाने वाले वृक्षों में सुन्दरता की दृष्टि से **रोडोडैन्ड्रॉन** का सर्वोच्च स्थान है। यहाँ इनकी अनेकों जातियाँ पाई जाती हैं। ये शीतोष्ण से लेकर हिमाद्रि जलवायु तक 2400 से 4200 मीटर की ऊँचाई तक फैले हुए हैं। सिक्किम में सर्वाधिक ऊँचाई पर पाये जाने वाले वृक्षों में इसी वंश की एक जाति **रोडोडैन्ड्रॉन नाइवेल हुक एफ** है जो 5500 मीटर की ऊँचाई तक मिलती है। शायद यही विश्व में सर्वाधिक ऊँचाई पर पाया जाने वाला वृक्ष है। **रोडोडैन्ड्रान** की अन्य प्रचलित प्रमुख जातियों में **रो० आर्बोरेटम** स्मिथ, **रो० ग्रेन्डे** वाइट तथा **रो० होड्जसोनाई** हुक एफ आदि हैं जिन्हें स्थानीय भाषा में गुराँस, करलिंगो आदि नामों से जाना जाता है। **रोडोडैन्ड्रॉन** के वृक्षों में अधिकतर मार्च से जून तक लाल, गुलाबी, पीले, बैंगनी रंग के फूल लगते हैं जो दूर से ही दर्शकों का मन मोह लेते हैं। अप्रैल-मई के महीनों में **रोडोडेण्ड्रन** की घनी आबादी वाले क्षेत्रों (याचुंग, युमथांग तथा युक्सुम आदि) में भारी संख्या में पर्यटक इन सुन्दर दृश्यों का आनन्द लेने के लिये आते हैं। रोडोडैन्ड्रॉन की कई जातियाँ अगस्त माह में भी पुष्पित होती देखी गई हैं। ये केवल और अधिक ऊँचाई वाले क्षेत्रों में ही मिलती हैं। यह ऐरीकेसी कुल का वृक्ष है।

2. **उतीस :** यह बिटुलेसी कुल का 25-30 मीटर ऊँचा वृक्ष है जो 1500-1800 मीटर ऊँचाई पर मिलता

है। वनस्पतिज्ञों की भाषा में इसे एलनस नेपालैन्सिस डी० डॉन कहा जाता है। इसमें अक्तूबर से दिसम्बर मास तक पुष्प तथा अप्रेल से मई तक फल लगते हैं।

रुद्राक्ष : ईलिओकार्पेसी कुल का यह वृक्ष 18 से 30 मीटर ऊँचा होता है। इसकी दो जातियाँ ईलिओकार्पेस सिक्किमेन्सिस मास्ट तथा ई० लेन्सीफोलियस राक्सब क्रमशः 1500 मीटर तथा 1800 से 2400 मीटर ऊँची पहाड़ियों पर उगती पाई जाती हैं। दोनों ही जातियों के फल खाने योग्य होते हैं। इस वृक्ष के बीजों का पौराणिक ग्रन्थों में भी वर्णन मिलता है। भगवान शिव के आँसू ही रुद्राक्ष के रूप में प्रगट हुए ऐसी लोक कथा प्रचलित है। आज भी रुद्राक्ष की माला को पवित्र माना जाता है व शैव साधु महात्मा अक्सर इसे धारण करते हैं। इसके वृक्षों पर अप्रेल मई में पुष्प लगते हैं व जुलाई से सितम्बर तक फल आते हैं।

4. भोजपत्र : बिटुलेसी कुल का यह वृक्ष 2700 से 3600 मीटर की ऊँचाई पर उगता हुआ मिलता है। बिटुला यूटीलिस डॉन के नाम से वनस्पतिज्ञों के बीच प्रचलित यह वृक्ष 12 से 20 मीटर तक ऊँचा होता है। इसमें अप्रेल से जून तक पुष्प तथा सितम्बर-अक्टूबर मास में फल लगते हैं। प्राचीन समय में इसकी छाल का उपयोग लिखने के लिये किया जाता था। भोजपत्र की एक अन्य सम्बन्धी जाति बि० सिलिन्ड्रोस्टेकिस वाल० के वृक्ष 25 से 30 मीटर ऊँचे होते हैं व केवल 1800 मीटर की ऊँचाई तक ही उगते हुए मिलते हैं।

लाप्चेफल : यह लॉरेसी कुल का वृक्ष है जो 1200 से 2500 मीटर तक की ऊँचाई पर मिलता है। वृक्ष 25 से 30 मीटर ऊँचा तथा मई में पुष्पित होता है। इसके फल जुलाई से सितम्बर मास तक आते हैं व मीठे, सरस तथा काफी पौष्टिक होते हैं। इन फलों के बारे में मान्यता है कि शरीर के लिये आवश्यक सभी विटामिन व खनिज इनमें पर्याप्त मात्रा में होते हैं। वनस्पतिज्ञों की भाषा में इसे मेचीलस इडुलिस किंग कहते हैं। इसी वंश की एक अन्य जाति मे० बिल्लोसा हुक० एफ कम ऊँचाई वाले क्षेत्रों में पाई जाती है। इस पर जनवरी से मार्च तक पुष्प तथा मार्च से मई तक फल लगते हैं। इसके फल भी खाने योग्य होते हैं।

6. चम्पा : माइकेलिएसी कुल के इस वृक्ष को पौराणिक समय से ही मान्यता प्राप्त है। इसके सुन्दर खुशबूदार फूलों के कारण ही काव्य में इसे विशिष्ट स्थान मिला है। चम्पा के वृक्ष 18 से 30 मीटर ऊँचे होते हैं व सिक्किम में 1500 मीटर ऊँची पहाड़ियों तक उगते हुए पाये जाते हैं। इन पर मार्च अप्रेल में चमकीले पीले रंग के फूल लगते हैं जिनसे भीनी-भीनी सुगन्ध आती रहती है। इसका वानस्पतिक नाम माइकेलिया चम्पाका लि० है। इसी वंश की दो अन्य जातियाँ मा० केथकार्टाई हुक० एफ एवं थॉम्सन तथा मा० लेन्युजिनोसा वाल० भी सिक्किम में मिलती है। मा० केथकार्टाई के पुष्प लाल, गुलाबी, सफेद अथवा बैंगनी आभा लिए हुये होते हैं व जून जुलाई में खिलते हैं। फल अक्टूबर-नवम्बर मास में लगते हैं। मा० लेन्युजिनोसा के पुष्प श्वेत रंग के होते हैं।

7. धुप्पी : सिक्किम के रोचक एवं उपयोगी वृक्षों में धुप्पी का महत्वपूर्ण स्थान है। यह अनावृत्तबीजी समूह का वृक्ष है जिसकी दो जातियाँ जूनीपैरस रिकर्वा हेम० तथा जू० स्यूडोसेबिना फिश० तथा मेय० सिक्किम में क्रमशः 2700 से 4000 मीटर तथा 4200 मीटर की ऊँचाई पर मिलती है। कम ऊँचाई पर पायी जाने वाली जाति के वृक्ष 6 से 10 मीटर तक ऊँचे होते हैं। इसकी छाल व काष्ठ को जलाने से वातावरण सुगन्धित हो जाता

है। भूटिया जाति के लोग धार्मिक अनुष्ठानों में इसका उपयोग करते हैं। जू० स्यूडोसेबिना के वृक्ष 20 मीटर तक ऊँचे होते हैं।

8. तेजपात : 1500 मीटर की ऊँचाई तक पाया जाने वाला लॉरेसी कुल का यह वृक्ष अपनी पत्तियो के लिये प्रसिद्ध है जिनका उपयोग मसाले के रूप में किया जाता है। इसका वानस्पतिक नाम सिनेमोमम तमाला-नीस है। इस वृक्ष पर फरवरी से अप्रैल तक पुष्प तथा जुलाई-अगस्त में फल लगते हैं। सिनेमोमम वंश की पाँच जातियाँ सिक्किम में पाई जाती हैं जिनमें सि० इम्प्रेसीनर्वियम, मेस्न तथा सि० ऑब्ट्यूसीफोलियम नीस० 2100 मीटर की ऊँचाई तक मिलती हैं।

9. जंगली जामुन : यह मिर्टेसी कुल का वृक्ष हैं जो सिक्किम की पहाड़ियों में 1500 से 1800 मीटर की ऊँचाई तक मिलता है। इसके तनों की ऊँचाई 30 मीटर तक होती है। अक्टूबर से दिसम्बर तक सफेद रंग के फूल तथा फरवरी-मार्च में खाने लायक गूदेदार फल लगते हैं। इसका वानस्पतिक नाम यूजीनिआ कुर्जीआइ डथी है।

10. जंगली आम : उष्ण कटिबन्धीय क्षेत्र में पाया जाने वाला यह वृक्ष सामान्य आम से काफी कुछ मिलता जुलता है। इसके फल अण्डाकार तथा अग्र भाग नुकीली चोंच जैसी शक्ल के होते हैं। इसे आम का स्वजात सम्बन्धी भी माना जाता है। सिक्किम में इसके वृक्ष 1500 से 1800 मीटर की ऊँचाई पर मिलते हैं। पुष्पों का रंग सफेद होता है। वनस्पतिज्ञों की भाषा में इसे मेन्गीफैरा सिल्वेटिका राक्सब कहते हैं। यह ऐना-कार्डियेसी कुल का वृक्ष है। इसके फल भी गूदेदार, सरस व खाने योग्य होते हैं।

सिक्किम के वृक्षों की शृङ्खला यहीं समाप्त नहीं होती। किन्तु सभी वृक्षों का वर्णन एक लेख में सम्भव नहीं है। इसीलिये केवल उपयोगी व रोचक वृक्ष ही यहाँ प्रस्तुत किए गये हैं।

★

विश्व में हे पुष्प! तू सबके हृदय भाता रहा।
दान कर सर्वस्व फिर भी हाय हरषाता रहा॥

—महादेवी वर्मा

चरक उद्यान

अरुप बनर्जी एवं रथीन कुमार चक्रवर्ती

प्राचीन काल से ही भारत के ऋषिगण जड़ी-बूटियों में बहुत रुचि रखते थे। द्विवेदी (1986) के अनुसार आयुर्वेद को पहले एक उपवेद के रूप में माना जाता था, लेकिन बाद में इसे एक स्वतन्त्र वेद माना गया। चरक, सुश्रुत, भावप्रकाश वगैरह आयुर्वेद को अथर्ववेद का एक अंग मानते थे, लेकिन कश्यपसंहिता एवं ब्रह्मवैवर्त-पुराण में आयुर्वेद को 5 वाँ वेद के रूप में माना गया है। अथर्ववेद में धन्वतरी ने आयुर्वेद के सम्बन्ध में लिखा है। इसके बाद महर्षि आत्रेय, भारद्वाज एवं अग्निवेश जैसे ऋषिगण, जो कि आयुर्वेदशास्त्र के अध्यापक थे कई चिकित्सा ग्रन्थ भी लिखा है(विश्वास, 1950)। इन्हीं ग्रन्थों के आधार पर चरक ने पीड़ित लोगों के लिये एक अमूल्य ग्रंथ की रचना को जिसे 'चरक संहिता' के नाम से जाना जाता है। चरक संहिता में विज्ञान को बहुत ही सही ढंग से सजाया सँवारा एवं चर्चा किया गया है जो कि एक शास्त्र की उचित रूपरेखा है। चरक संहिता में 36 तन्त्रयुक्तियाँ हैं जिसे कौटिल्य ने बहुत ही सही ढंग से समझाया है। चरक संहिता में करीब 700 औषधीय पौधों का विवरण है (जैन, 1968), लेकिन देश का विभाजन हो जाने से इन पौधों की संख्या में कुछ कमी तो जरूर है।

चरक का परिचय, जीवन पंजी और समयकाल के बारे में विद्वानों में मतभेद है, लेकिन यह निश्चित है कि वे प्रागैतिहासिक समयकाल के थे, एवं 'चरक संहिता' की रचना रामायण और महाभारत रचनाकाल के पूर्व ही हुई थी। चरक ने जिस पद्धति से 'चरक संहिता' की रचना की उसका वैदिक साहित्य से एक मेल है, लेकिन रामायण और महाभारत से नहीं है। महाराजा कनिष्क के दरबार के राजवैद्य "चरक" एवं संहिता के रचयिता चरक एक नहीं थे।

किंवदन्ती है कि देववैद्य धन्वन्तरी के पास महर्षि विश्वामित्र ने अपने पुत्र सुश्रुत को आयुर्वेद शिक्षा के लिये भेजा था। शिक्षा समापन के बाद उन्होंने जो ग्रंथ लिखा, वही "सुश्रुत संहिता" है। इन दो प्राचीन ग्रन्थों में शल्यचिकित्सा, शरीरतत्व, औषधियों का चयन इत्यादि के बारे में विस्तृत जानकारी दी गई है। अत: विज्ञान एवं प्रोद्योगिकी का विकास प्राचीनकाल से ही भारत में हुआ एवं इनका प्रसार मध्ययुगीय समयकाल (करीब 600-1500 ई०) में बहुत तेजी से हुआ। इस समय संस्कृत में लिखी गई शोध पत्रों की सूची इस प्रकार है :—कृषि-विज्ञान-15, भवन निर्माण-246, ज्योतिष विज्ञान-2136, भूगोल एवं भूगर्भशास्त्र-83, भौतिकशास्त्र-103, वनस्पति-शास्त्र-33, जीवविज्ञान-102 एवं आयुर्वेदशास्त्र-4106।

भारत में आयुर्वेद के बाद मुगलसाम्राज्य के समय यूनानी दवाओं का एवं ब्रिटिश शासन के समय आधुनिक अंग्रेजी दवाओं (ऐलोपैथिक दवाओं) का भी प्रचलन हुआ। इन दवाओं के साथ-साथ होम्योपैथिक दवाओं का भी थोड़ा बहुत प्रचलन हुआ, जो कि अनपढ़ों के बीच ठोकरें खाता रहा। यह देखा गया है कि जड़ी-बूटियों से प्रस्तुत औषधियाँ ज्यादा प्रभावकारी होती हैं। उत्तर भारत में सर्पगंधा को पगला का दवावाला पौधा के नाम से जाना जाता है। इससे निकाली गई दो एल्केलायड

"रिसरपिन" एवं "सरपाजिनिन" है जो कि रक्तचाप तथा पागलपन की चिकित्सा में बहुत उपयोगी है। जब ये दो एल्केलायड कृत्रिम रूप से रासायनिक प्रक्रियाओं से रसायनागारों में प्रस्तुत की गई तब वे उतना प्रभावकारी नहीं रहे। यह भी देखा गया है कि भारतीय सर्पगंधा एवं विदेशों में उगी हुई सर्पगंधाओं से निकाली गई एल्केलायड भी एक जैसा प्रभावकारी नहीं है। चिकित्सकगण भी जानते हैं कि अंग्रेजी दवाओं से रोग निरामय के बदले कभी-कभी उलझनें पैदा हो जाती हैं, जो कि खतरनाक भी साबित हो चुके हैं। अतः आजकल भारत के साथ-साथ कुछ अन्य विदेशी राष्ट्रों का भी वनौषधि एवं आयुर्वेदिक दवाओं में रुचि बढ़ गई है।

भारत के "चरक संहिता" एवं "सुश्रुत संहिता" जैसे प्राचीन ग्रन्थों में वनौषधियों के व्यवहार आदि के बारे में जानकारी तो प्राप्त होते हैं, लेकिन उनके पादप नमूने प्रमाण हेतु नहीं मिलते। अतः इन औषधीय पौधों का केवल संस्कृत नाम एवं थोड़ा बहुत वर्णन से पहचानना एक कठिन समस्या बन गयी है। कहीं-कहीं तो एक ही नाम दो पौधों को दिया गया है, और इससे समस्या और भी गम्भीर हो गयी है। अतः इन समस्याओं के हल के लिये वनस्पतिज्ञ, आयुर्वेदाचार्य एवं रसायनविदों का सहयोग अत्यन्त आवश्यक बन गया है। सन् 1947 में आजादी के बाद भारत में आयुर्वेद दवाओं की खपत बढ़ जाने से कई आयुर्वेद औषधि प्रस्तुत कारक संस्था जैसे—डाबर, वैद्यनाथ, हिमालयन ड्रग इत्यादि कम्पनियाँ जोरों से आयुर्वेदिक औषधियाँ प्रस्तुत करने लगे। 20 वीं शताब्दी के अन्त में कुछ अंग्रेजीदवा प्रस्तुतकारक संस्थायें भी आयुर्वेदिक औषधियाँ बनाने लग गये। लोगों का आयुर्वेदिक चिकित्सा में विश्वास देखकर सरकार ने भी आयुर्वेदिक शास्त्र का एवं चिकित्सा के लिये आयुर्वेदिक मेडिकल कालेज एवं शोध संस्थानों की स्थापना की।

ब्रिटिश सरकार के अधीन तत्कालीन रायल बोटानिक गार्डेन हावड़ा में ईपीकाक, सिन्कोना जैसे पौधों की खेती की गई। इसके पश्चात डा० टी० एन्डरसन (जो कि उद्यान के अधीक्षक थे) ने सन् 1855-56 में अन्य आर्थिक महत्ववाले पौधों का प्रदेशन के साथ-साथ एक औषधीय पौधों का उद्यान बनाने की कोशिश की परन्तु वे असफल रहे। अतः कुछ दिनों बाद इस योजना को बन्द कर दिया गया। इसके बाद कई वर्षों तक अन्य पौधों के साथ-साथ औषधीय पौधों का भी भारतीय वनस्पति उद्यान में प्रवेशन कराया गया। इस उद्यान के प्रथम भारतीय अधीक्षक डा० के० पी० विश्वास ने एक पुस्तक भी लिखी जिसे कलकत्ता विश्वविद्यालय ने सन् 1950 में प्रकाशित किया। इसके बाद सन् 1972 में डा० एस. एन. मित्रा ने इसकी फिर शुरुआत की। सन् 1982 के बाद उद्यान के उपनिदेशक ने औषधीय पौधों की उद्यान रचना में गहरी दिलचस्पी ली तथा इस उद्यान को साकार रूप देने में निरन्तर प्रयास जारी रखा। चूँकि यह उद्यान औषधीय पौधों से सम्बन्धित है अतएव महर्षि चरक के यादगार स्वरूप इस उद्यान का नाम 'चरक उद्यान' रख दिया गया है। आयुर्वेद, होम्योपैथी मेडिकल कालेजों का एवं वनस्पति छात्रों को कुछ मुख्य औषधीय पौधों से परिचय कराना ही इस उद्यान बनाने का मुख्य उद्देश्य रहा।

यह उद्यान भारतीय वनस्पति उद्यान के केन्द्रीय राष्ट्रीय पादपालय के पास है। इस उद्यान का कुल क्षेत्रफल 1443 वर्ग मीटर है। उद्यान के अन्दर 175 क्यारियाँ हैं एवं प्रत्येक क्यारी 2 मीटर लम्बी और 1.6 मीटर चौड़ी है। इस उद्यान में कई सड़कें बनाई गई हैं जिनमें कुछ 1.25 मीटर चौड़ी हैं एवं कुछ 1.65 मीटर चौड़ी हैं। सड़कें इस तरह बनायी गयी हैं जिससे कि हर एक क्यारी के पास पहुंच कर औषधीय पौधों का निरीक्षण

किया जा सके। प्रत्येक क्यारी में पौधों के लिये लेबेल भी लगाये गये हैं, जिसमें वनस्पति नामों के साथ-साथ औषधीय गुणों का विवरण भी लिखा गया है। इस उद्यान में कुछ रोचक औषधीय पौधों का प्रवेशन किया गया, जिसमें से कुछ प्रमुख हैं :

राउवाल्फिया सर्पेंटीना (सर्पगंधा), **वीथेनिया सोमनिफेरा** (अश्वगंधा), **सिनामोमेम कैम्फोरा** (कपूर) **सि० जेलानिकुम** (दालचिनी), **हेमिडेसमुस इन्डीकुस** (अनन्तमूल), **हिडनोकार्पुस कुरजी** (चालमूंगरा), **अन्नोमा अगुस्टा** (उलट कमल), **एकोरूस केलामुस** (बच), **पाइपर लांगुम** (पिपल्ली), **एरिस्टोलोकिया इन्डीका** (ईश्वरमूल), **प्लान्टागो ओबेटा** (इसबगोल), **आर्टिमिसिया वलगरिस** (नागदाना), **टिनोस्पोरा काँर्डीफोलिया** (गुलंच), **एलियोकार्पस रानिट्रस** (रूद्राक्ष) आदि।

इस उद्यान को पश्चिम बंगाल के माननीय मुख्यमन्त्री श्री ज्योति बसु ने 30 जनवरी, 1990 को आम जनता के लिये उद्घाटन किया। इस उद्यान को देखने हेतु विभिन्न वर्ग के लोग आते हैं एवं औषधीय पौधों के बारे में जानकारी प्राप्त करते हैं।

छिपा मही के मृदु अञ्चल में
जग का मूर्तिमान अनुराग
तुझसे ही सीखता जगत् है
औरों के हित करना त्याग।

—गोपाल शरण सिंह

बिरवे लगा के देखें

भगवती प्रसाद उनियाल

दूषित हुई हवायें
सांसों ने दी दुहाई।
बेचैनियां बढ़ी क्यों ?
जरा गौर करके देखें।
उन्मुक्त दोहनों से
आहत वसुन्धरा है।
पीड़ा का इसकी कोई
उपचार करके देखें।
आँचल से पुष्प चुन चुन
आँगन सजाया घर का।
परती जमीन को भी
गुलजार करके देखें।
सम्बन्ध मेदिनी से
"छत्तीस" बन निभाना।
सम्भव नहीं कदाचित
"तिरसठ" ही बन के देखें।
सागर में रहने वाले
लड़ते नहीं मगर से।
पर्यावरण में इसको
चरितार्थ करके देखें।
ठोकर से सीख लेना
दोस्तों है, बुद्धिमानी
अब भी समय है बाकी
बिरवे लगा के देखें।

०—०

आत्मदहनकारी वेणु

हरी शंकर पाण्डेय, अरुप बनर्जी एवं रथीन कुमार चक्रवर्त्ती

संस्कृत में बाँस को वेणु कहा गया है। बाँस घास वर्ग के पौधे हैं जो नम उष्णकटिबन्धीय, उपोष्ण तथा हल्के शीत प्रदेशों विशेषकर एशिया तथा दक्षिणी अमेरिका में पाये जाते हैं। बाँसों की कुछ जातियां उपोष्ण अफ्रीका तथा आस्ट्रेलिया में भी पायी जाती हैं। एशिया में भारत, बंगला देश, बर्मा, श्रीलङ्का, नेपाल, भूटान, चीन, जापान एवं दक्षिण-पूर्व के अधिकतर देशों में पायी जाती हैं। विश्व में बांसों के 60 वंश (जेनेरा) तथा लगभग 1500 जातियाँ पायी जाती हैं एवं उनमें केवल भारत में ही 100 से अधिक जातियाँ पायी जाती हैं।

आदिकाल से मानव का बाँसों से सम्बन्ध रहा है। प्राचीन काल में जन्म के समय बाँसों के छिलके से बनी धारवाली आरी नाभि काटने के लिए प्रयोग की जाती थी। आज भी मृत्यु के उपरान्त अंतिम संस्कार के लिये बाँस के शवाधार या टिकठी व्यवहार किये जाते हैं। इस प्रकार देखा जाता है कि मानव का जीवन जन्म से मृत्यु पर्यन्त बाँसों से जुड़ा है। इसके अलावा बाँसों का उपयोग चटाई, टोकरी, हाथ-पंखे, खिलौने, लाठी, पोलो-बॉल, मुरली, मछली पकड़ने की बंसी, औजारों का दास्ता आदि कुटीर उद्योगों में किया जाता है। यह कागज उद्योग एवं पुल और घर बनाने में भी उपयोग किया जाता है। बाँसों से वंश-लोचन या तवाशीर भी प्राप्त होता है जो आयुर्वेदिक तथा यूनानी दवाओं में व्यवहार किया जाता है। भारत के कुछ कुछ स्थानों में बाँस के नये कोपड़ से सब्जी एवं चटनी बनाई जाती है। इसके अलावा जनजाति बांस के बीजों से बनी लाई खाकर गुजारा कर लेते हैं। हाल में ही देहरादून के वन अनुसंधान संस्थान द्वारा किये गये प्रयोग में लोहे के बदले बांसों का छत-ढलाई, स्तम्भ तथा बिजली के खम्भे आदि कामों में सफलतापूर्वक इस्तेमाल किया गया है। बाँसों की बहुत सी जातियों का प्रयोग नयन गोचर-प्रदेश (लैन्डस्केप) के लिए भी किया जाता है।

बाँसों के विविध जातियों के पुष्पन विभिन्न समय के अन्तराल में होते हैं—कुछ में 30-40 वर्ष बाद तो कुछ में 70-80 वर्ष के अन्तर पर तथा किसी-किसी में तो 120 वर्ष बाद। बाँस में बहुत कम जातियां हैं जिनमें पुष्पन प्रत्येक वर्ष होता है जैसे बाम्बुसा आट्रा। साधारणतया बाँसों के विभिन्न जातियों में जब फूल आता है तो उस जाति के बांसकुन्जों या कोठियों की मृत्यु अवश्यम्भावी होती है, परन्तु कुछ जातियाँ ऐसी भी है जिसके बाँसकुन्ज पुष्पन के पश्चात भी नहीं मरते और उनका साधारण जीवन-चक्र चलता रहता है। बांसों की जातियाँ जिनमें पुष्पन के बाद अनेक बाँसकुन्ज स्वयं सूखकर जीवन-लीला समाप्त कर देते हैं ऐसी ही जातियों को यहाँ आत्मदहनकारी कहा गया है। बाँसों में इस तरह के पुष्पन तथा बाँसकुन्जों की मृत्यु समीप आ जाने से लोग शंकाग्रस्त हो जाते हैं जैसे आकाश में 'धूमकेतु के उभरने से। लोगों में ऐसा अन्ध-विश्वास है कि बांसों में फूल आने से अकाल, महामारी, बज्रपात या राजपतन जैसी अचानक विपत्तियां आ सकती हैं। अन्धविश्वास के कारण लोग फूले हुए झाड़ियों या कोठियों से प्राप्त बांसों से घर बनाने के लिए भी डरते हैं। उनका विश्वास है कि ऐसा करने से घर या परिवार को बहुत बड़ी क्षति हो सकती है जैसे आग लगना, घर गिर

जाना, किसी की आकस्मिक मृत्यु अथवा अन्य घटना का शिकार होना। वाल्मीकि रामायण के अयोध्या-काण्ड में स्वयं राजा दशरथ ने रानी कैकेयी को वरदान देते समय अपने शंका की तुलना बांसों में पुष्प आने के साथ किया था।

काँटा-बाँस में जब फूल आता है तो आसपास में उग रहे इस जाति के प्रत्येक बांसकुन्जों में करीब एक साथ ही फूल आते हैं चाहे इनकी उम्र अलग-अलग ही क्यों न हो। डा० हुकर का भी मत है कि किसी निश्चित उम्र पर बांस फूल नहीं देता, जैसा कि साधारण मान्यता है (डब्लू० ए० मुनरो [1868] मोनोग्राफ आफ दी बाम्बूसेसी, ट्रानसे० लीलीयन सो०, 26 : 1-157)।

वर्ष 1990 में पश्चिम बंगाल एवं उड़ीसा के कुछ-कुछ क्षेत्रों में कांटा बांस (बाम्बुसा-आरुनडिनेशिया) के कोठियों में आकस्मिक फूल आने से ग्रामवासी शंकाग्रस्त होकर समाचार पत्रों के सम्पादकीय कालम में पत्र भी छपवाये (आनन्द बाजार पत्रिका, दि० 18-7-90 एवं 5-9-90)। सभी कटवा या कांटा बांस के बांसकुन्ज एक साथ सूख जाने से ग्रामीणों की चिन्ता दो कारणों से ज्यादा बढ़ गयी—एक तो आर्थिक स्थिति में बिगाड़ और दूसरा डर महामारी या अकाल जैसे संकट का टूट पड़ना। इन पत्रों के छपने के बाद लेखकों में एक (अ० ब०) निरीक्षण हेतु निकल पड़े। पश्चिम बंगाल में मिदनापुर जिले के जकपुर से उड़ीसा के बालासोर एवं भद्रक जिले के सभी कटवा बांस के बांसकुन्जों में प्रचुर मात्रा में पुष्पन का अवलोकन किया परन्तु इसी मिदनापुर जिला के उत्तरी भाग में स्थित झाड़-ग्राम से बिहार राज्य के टाटानगर एवं उड़ीसा के राउर-केला क्षेत्र में इसी जाति के बांसकुन्जों में कहीं भी फूल नहीं देखा गया। पश्चिम बंगाल तथा उड़ीसा के कुछ क्षेत्रों में कांटा-बांस में एक साथ पुष्प आने से जो भय एवं शंका पैदा हुआ है उसकी कोई वैज्ञानिक व्याख्या या प्रयोगात्मक प्रमाण नहीं है।

अन्य पेड़ पौधों की तरह बाँसों में भी फूल एवं बीज बनते हैं जो कभी कभी मनुष्यों के लिए बहुत बड़ा सहारा होते हैं। ऐसा कहा जाता है कि सन् 1812 में उड़ीसा के बांसों में आम पुष्पन के साथ-साथ दुर्भिक्ष हुआ था। इस समय बाँस के बीजों ने हजारों मनुष्य को आहार प्रदान कर रक्षा की। इसके अलावा मिस्टर गैरे के रिपोर्ट का हवाला देते हुए कहा गया है कि सन् 1866 में बाँसो के बीज बंगाल के मालदा जिले के बाजार में 13 सेर प्रति रुपये के दर से बिका था (मुनरो, 1868)।

साधारण जनता बाँसों के पुष्पन से भयभीत होती है परन्तु वनस्पतिज्ञ वर्ग में दिलचस्पी एवं उत्सुकता बढ़ जाती है। पुष्पन लम्बे समय के अन्तराल पर होने के कारण वेणु-पुष्पों का अवलोकन एवं इससे सम्बन्धित अनुसन्धान असम्भव तो नहीं परन्तु कठिन अवश्य रहा है। बाँस आर्थिक महत्व वाले पौधे होने के कारण वनस्पतिज्ञ गेहूँ, धान, दाल आदि की तरह इसमें भी संकरण, विकिरण तथा उत्परिवर्तन द्वारा उन्नत किस्म के वेणु मानव को उपहार स्वरूप देना चाहते है। यह तभी सम्भव है जबकि बांसों की विभिन्न जातियों में पुष्पन एक साथ या थोड़े समय के अन्तराल पर हो। इस दिशा में पुणे के नेशनल केमिकल लेबोरेटरी के वैज्ञानिकों ने ऊत्तक संवर्धन (टीसु कलचर) द्वारा बांसो के दो जातियों में तीन माह में ही पुष्पन लाने में सफलता प्राप्त की। संवर्धन में अपनायी गयी विधि का विवरण इस प्रकार है। सर्वप्रथम सुक्रोज तथा अगर से बने अम्लीय साधन में जीवन-योग्यता रखने के एक सप्ताह बाद अंकुरण देखा गया। इसके बाद अंकुरित बीजों को मध्यम रोशनी में उस समय तक रखा गया जबतक ये विकसित होकर 5"-6" ऊँचे पौधे न बन जाय। तत्पश्चात इन पौधों

पूर्वी घाट क्षेत्र में तथा 25 पश्चिमी घाट क्षेत्र में पाई जाती हैं जो 41 जेनेरा और 29 कुलों के अन्तर्गत विभाजित हैं। राइजोफोरेसी, सोनेरेटिएसी, एविसिनिएसी कुलों का अपनी मैन्ग्रोव जातियों के सघन विकास के कारण वर्चस्व है। कोम्ब्रेटेसी, एरेकेसी, स्टर्कुलिएसी, एकेन्थेसी मेलिएसी, फेबेसी, मिर्सिनेसी, एस्लेपिएडेसी, यूफोर्बिएसी, प्लम्बेजिनेसी एवं कुछ अन्य कुलों की मैन्ग्रोव जातियों की भी सामान्य व्याप्ति है। लवण सहिष्णु पौध संसर्ग (प्लाण्ट एसोसिएट) अथवा ज्वार भाटे के स्तर से अधिक ऊँचाई वाले भूआकृति पर उगने वाले लवणोद्भिद (हेलोफाइट्स) तथा जो जातियाँ मैन्ग्रोव परितन्त्र में मुख्यतः शुष्क रहती हैं, उन्हें चिनोपोडिएसी, एकेन्थेसी और प्लम्बेजिनेसी कुलों में देखा जा सकता है। इसके अलावा मैन्ग्रोव परितन्त्र में अन्य कुलों के पौधों में शैवालों की 47 जातियाँ (30 जेनेरा के अन्तर्गत) और समुद्री घास की 10 जातियाँ (7 जेनेरा के अन्तर्गत) पाई जाती हैं। डेल्टा स्थिति के कारण पूर्वी घाट क्षेत्र में कच्छ वनस्पति प्रमुखता से व्याप्त है।

(अ) पूर्वी घाट क्षेत्र के मैन्ग्रोव—इस क्षेत्र को निम्नलिखित उपक्षेत्रों में विभाजित किया जा सकता है—

(i) **सुन्दरवन डेल्टा पारितन्त्र**—

यह विश्व का सबसे बड़ा कच्छ वनस्पति क्षेत्र जिसका अधिकांश भाग बंगलादेश में पड़ता है। भारत में इसका क्षेत्र 4200 वर्ग कि० मीटर है। यह माना जाता है कि सुन्दरवन का वर्तमाननाम कभी इस क्षेत्र में प्रचुरता से पाये जानेवाले **हेरिटिएरा फोम्स** के स्थानीय नाम 'सुन्दरी' पर पड़ा है। सुन्दरवन मैन्ग्रोव क्षेत्र एक बहुत ही जटिल परितन्त्र के रूप में विकसित है जिसमें अनेकों विविधता एवं क्षेत्रफल वाले द्वीप अपने में अधिकतम प्रजातियों को संजोए हुए है। इस प्रकार का वनस्पति-जात देश के अन्य मैन्ग्रोव क्षेत्रों में कम है। वनस्पतिजात की विविधता पूर्वीतट से दक्षिण की ओर क्रमशः कम होती जाती है और पश्चिमी तट पर केरल से ऊपर की ओर सौराष्ट्र तथा कच्छ क्षेत्र में निम्नतम स्तर पर पहुँच जाती है। सुन्दरवन क्षेत्र में पाई जाने वाली कुछ प्रमुख जातियाँ हैं :—**राइजोफोरा, एविसीनिया, जाइलोकार्पस, नाइपा, फिनिक्स, एट्रिप्लेक्स, एकैन्थस** और **सोनरेसिया** आदि।

(ii) **महानदी, उड़ीसा का कच्छ वनस्पति क्षेत्र :**

इसका क्षेत्रफल लगभग 200 वर्ग किलोमीटर है। कृषि कार्य हेतु भूमि में परिवर्तन और पाराद्वीप में जहाज-रानी सुविधा के विकास के कारण यह क्षेत्र काफी अपभ्रंश स्थिति में है। फिर भी वायुशिफ के घने जंगल भीतर-कनिका मुहाना क्षेत्र तथा देवी एवं धम्रा नदियों के बीच पाये जाने वाले डेल्टीय क्रीक में पाये जाते हैं। सुन्दरवन की तरह **फिनिक्स पालूदोसा, पोर्टरेसिया कोएरक्टेरा** और **एजिएलिटिस रोटण्डीफोलिया** मुहानों की तरफ प्रचुर मात्रा में हैं। ज्वार-भाटा वाले मैन्ग्रोव क्षेत्र में **राइजोफोरा, कण्डेलिया** इत्यादि प्रमुख हैं।

उड़ीसा के अन्य मैन्ग्रोव क्षेत्रों में बड़ाभलंगा मुहाना क्षेत्र में **एविसीनिया, सोनरेसिया, राइजोफोरा** महत्वपूर्ण है।

(iii) **गोदावरी-कृष्णा (आ० प्र०) का कच्छ वनस्पति :**

इन दो नदी मुहानों के कच्छ वनस्पति जात का क्षेत्र-फल लगभग 200 वर्ग किलो मीटर है जिसमें मैन्ग्रोव प्रजाति की संख्या महानदी क्षेत्र से कम है क्योंकि ईन्धन हेतु वनों के कटाव तथा डेल्टीय प्रदेश के बड़े भाग का कृषि कार्य हेतु उपयोग के कारण यह क्षेत्र द्वितीय चरण में है। **सोनरेसिया, एविसीनिया, हेरिटिएरा** तथा **डेरीस** प्रमुख जातियाँ हैं।

(iv) कावेरी (तमिलनाडु) का कच्छ वनस्पति : 150 वर्ग किलो मीटर क्षेत्र में फैले इस मैन्ग्रोव का लगभग 14 वर्ग किलो मीटर का कल्लई (पिछावरम सहित) क्षेत्र मैन्ग्रोव के 20 प्रजातियों से आच्छादित है। पिछावरम मंगल क्षेत्र में विभिन्न जातियों के अलग-अलग जोनेशन है जिसमें मुथुपेट क्षेत्र में संरक्षण के कारण **एविसीनिया मेरिना** के सुन्दर जंगल हैं। **राइजोफोरा** जलान्तराल और संकरी खाड़ियों (क्रोक) में पाये जाते हैं।

(ब) पश्चिमी घाट के मैन्ग्रोव क्षेत्र

अनियमित ढङ्ग से फैले मैन्ग्रोव के जंगल केवल उन्हीं तटीय क्षेत्रों में पाये जाते हैं जहाँ अनुकूल अवस्था उपलब्ध है जैसे गोवा, महाराष्ट्र और गुजरात के कुछ क्षेत्र; फिर भी पूर्वी घाट के विपरीत इस क्षेत्र में जातियों में विभिन्नता के लक्षण बहुत ही कम है।

पश्चिमी घाट के विभिन्न क्षेत्रों में पाये जाने वाले प्रजातियों के प्रमुख लक्षण इस प्रकार से हैं :—

(v) अप्रवाही जल तन्त्र

वेली (त्रिवेन्द्रम के निकट, केरल) के इस वायुशिफ क्षेत्र में प्रजातियों की संख्या में जैविक दवाब और नारियल के रोपण के कारण कच्छ वनस्पति की संख्या में काफी कमी हुई हैं।

(vi) कर्नाटक तट के मैन्ग्रोव क्षेत्र :

इस क्षेत्र में **राइजोफोरा, कांडेलिया, एविसीनिया, सोनरेसिया** और **एकैंथस** प्रमुख हैं।

(vii) गोवा के मैन्ग्रोव क्षेत्र :

लगभग 200 वर्ग किलो मीटर क्षेत्र में सात नदी मुहाने क्षेत्र हैं। इसका लगभग 75 प्रतिशत मांडोवी एवं जुआरी तथा कामबर्जुआ केनाल हार्बर क्षेत्र में है जिसमें मैन्ग्रोव की 20 प्रजातियाँ पाई जाती हैं।

(viii) महाराष्ट्र तट के मैन्ग्रोव क्षेत्र :

यह क्षेत्र लगभग 300 वर्ग किलो मीटर में फैला हुआ है जिसका अधिकांश भाग भूमि-सुधार कार्यक्रमों तथा ईन्धन हेतु अत्यधिक उपयोग के कारण समाप्तप्राय है जिसके फलस्वरूप कुछ प्रमुख जातियाँ जैसे **लुम्नीट्जेरा रेसीमोजा** जो बम्बई के बांद्रा क्षेत्र में सन् 1934 में पाई गई थी, अब नहीं दिखाई देती। इसी प्रकार **राइजोफोरा** और **ब्रुगुइएरा जिम्नोराइजा** जातियाँ या तो समाप्त हो गई है या समाप्त प्राय हैं।

(ix) गुजरात तट के मैन्ग्रोव क्षेत्र :

260 वर्ग किलो मीटर का मैन्ग्रोव क्षेत्र लवणीय क्षेत्रों, ज्वारभाटे से बने क्रीक में पाये जाते हैं।

(स) अण्डमान निकोबार क्षेत्र :

अण्डमान निकोबार प्रायद्वीप की कच्छ वनस्पति दूर तथा मानव जाति के पहुँच के बाहर होने के कारण अब भी एक उत्तम एवं विकसित मैन्ग्रोव क्षेत्र के रूप में 1190 वर्ग किलो मीटर का दायरा 20 जातियों से सुशोभित है। इनमें **राइजोफोरा, ऐजिसेरास, एविसीनिया, ब्राउनलोविया** एवं **हेरिटिएरा** प्रमुख है। **एकैन्थस** कहीं-कहीं पाये जाते हैं।

पूर्वी तट में मैन्ग्रोव वनस्पति सामान्यतया एकरूपीय हैं। इसके विपरीत पश्चिमी घाट के विभिन्न क्षेत्रों में अनुक्षेत्र वर्गीकरण (जोनेशन) परिस्थिति की बदलाव के कारण बदलते रहते हैं।

कच्छ वनस्पति के आर्थिक एवं पारिस्थितिकी महत्व :

कच्छ वनस्पति एक बहुत ही महत्वपूर्ण राष्ट्रीय स्रोत है। इससे ईंधन के रूप में लकड़ी एवं कोयला, फर्नीचर हेतु टिम्बर, लकड़ी एवं छालों से रंगने हेतु टैनिन, गोंद, पशुओं के लिए चारा और कागज उद्योग के लिए कच्चा

माल प्राप्त होता है। इसके पुष्पों से मधु काफी बड़ी मात्रा में एकत्र किया जाता है। कुछ प्रजातियों जैसे **एकैन्थस इलीसीफोलियस, बुगईएरा जिग्नोराइजा** तथा **राइजोफोरा म्यूक्रानाटा** का औषधीय महत्व है।

मैन्ग्रोव समुद्र-नदी मुहाने क्षेत्र में अतिलवणीय दशा को नियंत्रित करने के साथ-साथ कार्बनिक पदार्थों से युक्त जल के बहाव तथा नदियों द्वारा लाये गये कछारी मृदा को स्थिर करने में सहायक होता है। साथ ही नदियों द्वारा लाये गये मलवे को समुद्रतल के साथ सामंजस्य करने में सहायक होने के कारण एक अति उत्पादकता वाले पारिस्थितिकी तन्त्र का निर्माण करता है। इसके अलावा यह समुद्र से प्रवाहित हुए तैलीय चिकनाई के विरोध में प्रतिरोधक का कार्य करता है। ज्वारभाटा, तूफान व अत्यधिक गति वाले वायु से पृष्ठ देश की सुरक्षा करता है।

संरक्षण की आवश्यकता :

बढ़ती जनसंख्या के कारण भारत की कच्छ वनस्पतियों पर जैवीय दबाव पड़ रहा है और विभिन्न प्रयोजन जैसे कृषि, ईन्धन, पशुओं हेतु चारा और आवास हेतु उपयोग के कारण उसका क्रूरता से शोषण हो रहा है। एक महत्वपूर्ण आर्थिक स्रोत एवं पारिस्थितिकी संतुलन के स्रोत के कारण भारत सरकार के पर्यावरण एवं वन मन्त्रालय ने इसके संरक्षण हेतु अनेकों कदम उठाए हैं :

(1) कच्छ वनस्पतियों के संरक्षण और प्रबन्ध के बारे में सरकार को उपयुक्त संरक्षण नीतियों, अनुसंधान और प्रशिक्षण सम्बन्धी सलाह देने के लिए एक राष्ट्रीय कच्छ वनस्पति समिति गठित की गयी है जिसकी सिफारिशों के आधार पर 15 मैन्ग्रोव क्षेत्रों की शिनाख्त की गई है। देश के अन्य कच्छ वनस्पति क्षेत्रों में इस प्रयोजना का विस्तार किया जा रहा है।

(2) राज्य स्तर पर संचालन समितियों का गठन किया गया है जो कार्य योजनाओं को तैयार करती हैं और कार्य की प्रगति की निगरानी भी करती हैं। इन योजनाओं में सर्वेक्षण और सीमांकन का कार्य भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण द्वारा किया जा रहा है। भा० व० स० ने पादप जात का वर्गीकृत अध्ययन करने के साथ-साथ पादप निर्धारण और संरक्षण की दिशा में भी सराहनीय योगदान दिया है। इस सर्वेक्षण द्वारा अबतक महानदी डेल्टा की कच्छ वनस्पति पर कार्य पूरा कर लिया गया है और तटीय क्षेत्रों का पादप सर्वेक्षण प्रारम्भ कर दिया है।

(3) भा०व०स० द्वारा एक नवीन योजना के अन्तर्गत मैन्ग्रोव क्षेत्रों में नाइट्रोजन स्थिरीकरण पर शोधकार्य प्रारम्भ किया जा रहा है।

(4) पर्यावरण एवं वन मन्त्रालय द्वारा पुनर्जनन, वनरोपण और अन्य सुरक्षात्मक उपाय करने के साथ-साथ सुदूर-संवेदी तकनीकों के जरिए देश के समूचे कच्छ वनस्पति क्षेत्रों का मानचित्रण भी शुरु किया गया है। भा.ब.स. ने भारतीय कच्छ वनस्पति के आइडेंटिफिकेशन मैनुअल को प्रकाशित किया है।

कच्छ वनस्पति के संरक्षण की दिशा में उपरोक्त के अलावा गुजरात के पोरोटन द्वीप (द्वारका) जखौमुन्द्रा (कच्छ), तमिलनाडु में पिछावरम तथा पश्चिम बंगाल के सुन्दरवन आदि क्षेत्रों में मैराइन नेशनल पार्क की योजना पूरी हुई है और गोवा के चौराव आईलैण्ड तथा कोचीन के मैन्ग्रोव क्षेत्रों में पक्षी अभयारण्य की योजना बनाई गयी है। इस महत्वपूर्ण वनक्षेत्र के संरक्षण एवं विकास में सबका सहयोग अपेक्षित है।

★

स्टिल्ट मूल के साथ **राइजोफोरा म्यूक्रोनेटा** : अण्डमान की एक अन्य कच्छ वनस्पति

अण्डमान प्रायद्वीप में पाये जाने वाले कच्छ वनस्पति ब्रुगुइएरा जिम्नोराइजा
का एक पूर्ण विकसित वृक्ष बट्रेसेस एवं आधार मूल के साथ

सिक्किम : पर्यटक के दृष्टिकोण से

विजय कृष्ण

भारत का विशाल भौगोलिक क्षेत्र अपने में अनेकों विभिन्नताओं और प्राकृतिक सौन्दर्य से भरपूर क्षेत्रों को संजोए हुए है। ऐसे ही अपूर्व प्राकृतिक सौन्दर्य से भरपूर सुन्दर प्रदेश सिक्किम है जिसका प्राचीन नाम सुखिम अर्थात् सुख देने वाला था। इस पर्वतीय प्रदेश, जिसका अधिकांश भाग बर्फीले पहाड़ों, घने जंगलों और पहाड़ी झरनों से भरा पड़ा है, का प्रमुख आकर्षण प्राचीन बौद्ध मन्दिरें हैं जो पर्यटकों को अनायास ही अपनी ओर आकर्षित करते हैं। यहाँ के प्राकृतिक सौंदर्य तथा गुफाओं के गाथाओं से इतिहास के पन्ने रंगे पड़े हैं जिनका वास्तविक आनन्द इस मनोहर प्रदेश में एकबार आकर ही लिया जा सकता है।

सिक्किम, जिसकी राजधानी गंगटोक है, का क्षे० फ० 7300 वर्ग कि०मी० है और यह 27°5′ और 28°9′ उत्तरी अक्षांश तथा 87°59′ और 88°56′ पूर्वी देशान्तर पर स्थित है। इसके उत्तरी भाग में तिब्बत, दक्षिण में प० बंगाल, पूर्व में भूटान और पश्चिम में नेपाल स्थित हैं। तिस्ता और रंगीत दो प्रमुख नदियाँ हैं जिसमें कई झरनों का पानी आकर मिलने से जलस्रोत काफी बढ़ जाता है। 8585 मीटर ऊँची कंचनजंगा की शृङ्खलाएं अक्टूबर से मार्च तक बर्फ से और अप्रेल से सितम्बर तक बादलों से ढंकी रहती है। सिक्किम प्रदेश में 4 जिले हैं—पूर्व, पश्चिम, उत्तर एवं दक्षिण जिला जिनके मुख्यालय क्रमशः गंगटोक, ग्याल्जिंग मंगन तथा नामची हैं। 1568 मीटर ऊँचाई पर बसा गंगटोक शहर सिलीगुड़ी से 110 कि० मी० दुर अवस्थित है। यह सड़क एवं बागडोगरा हवाई अड्डे से जुड़ा हुआ है। गंगटोक शहर की सुन्दरता रात में और निखर जाती है। शहर मे और इसके आसपास बहुत सारे बौद्ध मन्दिर हैं। "महाराजा का प्रासाद" चिड़िया घर एवं सचिवालय के समीप है। इसके प्रांगण में महात्मा बुद्ध की एक भव्य प्रतिमा है। इस उद्यान में मुख्यतः ट्री फर्न और आर्किड की कई प्रजातियाँ हैं जो बरबस ही पर्यटकों को मोहित कर लेते हैं। इससे थोड़ी दूर पर तिब्बतीय अनुसंधान संस्थान स्थित हैं जहाँ विश्व के छात्र-छात्राएं शोध हेतु आते हैं।

गंगटोक के पास ही इञ्चे बौद्ध मन्दिर है जो बौद्ध भिक्षुओं के लिए एक रमणीय स्थल है। राजभवन द्वार के समीप जीरो प्वाइण्ट पर कुटीर उद्योग है जहाँ बहुत ही सुन्दर कालीन, काष्ठ शिल्प, हाथ से बने कागज का निर्माण होता है। जीरो प्वायंट से 7 कि०मी० दूर उत्तर राजपथ पर ताशी व्यू प्वाइंट है जहां से कंचनजंगा की पर्वत श्रृङ्खलाएं स्पष्ट दिखती हैं।

सिक्किम सरकार के वन विभाग के अन्तर्गत दो आर्किड अभयारण्य—देवराली तथा सरमसा आर्किड अभयारण्य हैं। देवराली आर्किड अभयारण्य तिब्बतीय संस्थान के नजदीक है। इसकी स्थापना 1970 में की गई थी। इसमें आर्किड की लगभग 225 प्रजातियाँ हैं जिनमें मुख्यतः लेडीज स्लीपर की प्रजातियां (**पेफिओपेडिलम विलोसम, प० फयरीएनम**) और **डेन्ड्रोबियम, बल्बोफिल्म** एवं **वान्दा** इत्यादि। सरकसा आर्किड अभयारण्य, जो गगटोक से 14 कि० मीटर की दूरी पर स्थित है, में लगभग 200 प्रजातियाँ हैं जिनमें **सिम्बिडियम** और **डेन्ड्रोबियम डिवोनिएनम** प्रमुख हैं। बौद्धभिक्षुओं का एक दर्शनीय

स्थल रुमटेक बौद्ध मंदिर गंगटोक से 25 कि०मी० की दूरी पर दूसरी पहाड़ी पर स्थित है। ल्हासा के बौद्ध मन्दिर के बाद इसका द्वितीय स्थान है, ऐसी धारणा है।

पश्चिम सिक्किम कई मायनों में महत्वपूर्ण है। युकसम से थोड़ी ही दूर पर जंगलों के बीच एक खेचुपुरी नामक वृहद झील है जिसका महाभारत में पांडवों के वनवास के समय जिक्र आता है। इसमें 5 हंस रहते हैं जो झील के पानी को निर्मल एवं स्वच्छ रखते हैं। एक बहुत पुराना बौद्ध मन्दिर गेजिंग के समीप पेइमांगसी में है। इसी प्रकार सिक्किम का उत्तरी भाग अपने प्राकृतिक सौन्दर्य, सघन जंगल, वन प्राणी, औषधीय महत्ता वाले वनस्पतियों, फूलों, हिमाच्छादित पर्वत शृङ्खलाओं के अलावा एक स्वास्थ्यवर्धक गर्म जलस्रोत के लिए प्रसिद्ध है। इस भाग के पादप प्रजातियों में एबीज, सूजा, जूनिपेरस, लैरिक्स, बेतुला, प्रिमूला, रोडोडेन्ड्रान इत्यादि प्रमुख है।

1986-87 में वन विभाग ने रोडोडेन्ड्रान प्रजाति के संरक्षण एवं विकास के लिए युमथांग के समीप सिंगबा रोडोडेन्ड्रान अभयारण्य की स्थापना की। इनमें प्राप्य 36 प्रजातियों के पुष्प जब अप्रेल-मई के महीनों में खिलते हैं तो ऐसा प्रतीत होता है जैसे चारों ओर फूलों की बहार आ गई हो। विश्व में सबसे ऊँचाई पर स्थित कंचनजंगा राष्ट्रीय उद्यान जो अपनी अद्भुत प्राकृतिक छटा के लिए विश्व प्रसिद्ध है, सिक्किम के उत्तरी भाग में ही है।

सिक्किम का दक्षिणी भाग (मुख्यालय : नामची) प० बंगाल की सीमा से सटा हुआ है। यहाँ से बड़ी इलायची, अदरख दूसरे प्रान्तों में भेजा जाता है। वैसे मूलतः सिक्किम में पौधों की 500 प्रजातियां पाई जाती हैं परन्तु कैश क्राप में संतरा, सेव, बड़ी इलायची, अदरख और चाय की पत्ती ही प्रमुख है।

इन सबके अलावा पर्यटकों की सुविधा के लिए सरकार ने कुछ प्रतिबंधित क्षेत्रों जैसे क्यांग-नोसला, छांगू झील, कुपुप, चुङ्गथांग, लाचुङ्ग तथा लाचेन इत्यादि को पर्यटन हेतु अनुमति दे दी है। तो आइये, क्यों न हम इस सुन्दर प्रदेश का एक बार भ्रमण करें।

तुलसी संत सुअंबतरु फुलत फलत पर हेत
इतते ये पाहन हनत उतते वे फल देत॥

—तुलसीदास

हमारे राष्ट्रीय और राजकीय वृक्ष एवं पुष्प

बी० डी० शर्मा, डी० सी० एस० राजू एवं आर० सी० श्रीवास्तव

भारतीय संस्कृति एवं सभ्यता अनादिकाल से ही अरण्य-प्रधान रही है। जन-जीवन में वृक्षों की उपयोगिता को देखते हुए उन्हें दैनिक जीवन में विशेष स्थान प्राप्त रहा है। हमारे धर्मग्रंथों में वृक्षों के अंग-प्रत्यंग में देवताओं का वास होने की बात कही गई है। आज के परिप्रेक्ष्य में यदि हम सोचें तो पादपसंरक्षण का इससे सुन्दर एवं सफल तरीका और कोई नहीं हो सकता क्योंकि जन-साधारण यदि उनकी उपयोगिता के वैज्ञानिक दृष्टिकोण को समझ या अपना न सके तो उसे धर्म से जोड़कर निश्चय ही पेड़-पौधों के संरक्षण का कार्य किया जा सकता है और इसे हमारे मनीषियों ने कर दिखाया है।

पीपल (फाइकस रेलिजिओसा) की बहुरूपीय उपयोगिता को देखते हुए हमारे पूर्वजों ने इसे सर्वपूज्य वृक्ष का स्थान दिया। इसमें कोटि-कोटि देवताओं का वास बताया गया। इसकी लकड़ी जलाने को पाप बताया गया। आज इसे "राष्ट्रीय-वृक्ष" का स्थान देकर हमने उचित ही किया है। यही कहानी है माँ लक्ष्मी के वास-स्थान कहे जाने वाले हमारे राष्ट्रीय-पुष्प 'कमल' (नीलम्बो न्यूसीफेरा) की।

डा० सुधांशु कुमार जैन ने 1984 में विभिन्न राज्यों एवं केन्द्र शासित प्रदेशों के लिए राजकीय वृक्षों एवं पुष्पों को नामित किया। इसके लिए उन्होंने स्वदेशी, उपयोगी, सुलभ रूप से प्राप्य, लुभावने तथा प्राचीन ग्रंथों में वर्णित वृक्षों एवं पुष्पों को प्राथमिकता दी।

डा० जैन द्वारा प्रस्तावित राजकीय वृक्षों की सूची निम्न है :

तालिका 1 : विभिन्न राज्यों के लिए नामित राजकीय वृक्ष (जैन 1984)

राज्य/केन्द्र शासित प्रदेश	पौधे का नाम	
	प्रचलित नाम	वैज्ञानिक नाम
1. अन्दमान एवं निकोबार द्वीप समूह	पादुक	टेरोकार्पस डलवर्जिब्याएडिस
2. अरुणाचल प्रदेश	काएल	पाइस वालीचिआना
3. असम	गुर्जन	डिप्टेरोकार्पस टर्बिनेटस
4 आन्ध्र प्रदेश	लालचंदन	टेरोकार्पस सैन्टेलिनस
5. उड़ीसा	तेन्दू	डायोस्पाइरस मेलेनोजाइलान
6. उत्तर प्रदेश	आम	मैन्जीफेरा इन्डिका
7. कर्नाटक	चंदन	सैन्टालम एल्बम
8. केरल	रोज़उड	डलबर्जिआ लैटीफोलिया
9. गुजरात	बबूल	एकसिया नीलोटिका

10. गोवा	हिबिसकस	हिबिसकस टीलिएसियस
11. जम्मू एवं कश्मीर	भोजपत्र	वेतुला यूटिलिस
12. तमिलनाडु	इमली	टैमेरिन्डस इन्डिका
13. त्रिपुरा	अगर	एक्वीलेरिया एगैलोचा
14. पंजाब	शीशम	डलबर्जिया शिशु
15. दमन-दीव	दोउम-पाम	हिफनी डाइकाटोमा
16. दिल्ली	सेमल	बाम्बेक्स सीवा
17. पश्चिम बंगाल	वट	फाइकस वेन्धलिन्सिस
18. पान्डीचेरी	ताडीपाम	बोरैसस फ्लेबेलीफर
19. बिहार	पलास	ब्यूटिया मोनोस्पर्मा
20. मध्य प्रदेश	सागौन	टेक्टोना ग्रैन्डिस
21. मणिपुर	ओक	क्वेरकस गिफिली
22. महाराष्ट्र	अर्जुन	टर्मिनेलिया अर्जुना
23. मेघालय	संतरा	सिट्रस इंडिका
24. मिजोरम	बाँस	अरुनडिनेरिया ग्रिफिथिआना
25. नागालैण्ड	सुपारी	एरिका नागेन्सिस
26. राजस्थान	खेजरा	प्रोसोपिस सिनेरेरिया
27. सिक्किम	गोराँस	रोडोडेन्ड्रान थाम्सोनी
28. हरियाणा	नीम	एजाडिराख्टा इंडिका
29. हिमाचल प्रदेश	देवदार	सिड्रस देवदारा

डा० टी० एन० खुशू के अनुसार उत्तर प्रदेश के लिए साल (शोरिया रोबस्टा), गुजरात के लिए नीम (एजाडिराख्टा इण्डिका), जम्मू एवं कश्मीर के लिये एसकुलस इण्डिकस, दिल्ली के लिये अर्जुन (टर्मिनेलिया अर्जुना), पश्चिम बंगाल के लिये विस्चोफिया जवानिका; बिहार के लिए महुआ (मधुकालैटीफोलिया भेद लैटीफोलिया), मध्य प्रदेश के लिये बरगद (फाइकस बेंघालेन्सिस), मणिपुर के लिये तूना (सिड्रेला तूना) महाराष्ट्र के लिये सागौन (टेक्टोना ग्रैन्डिस), मेघालय के लिये सिट्रस हिस्ट्रक्स, नागालैण्ड के लिये (एरिका कटैचू), हरियाणा के लिये बबूल (अकेसिया नीलोटिका) उपयुक्त नाम होंगे।

इस बीच प० बंगाल सरकार ने छातिम (एल्सटोनिया स्कालरिस) को, तमिलनाडु ने ताड़ीपाम (बोरैसस फ्लेबेलीफर) को, जम्मू एवं कश्मीर ने प्लेटेनस ओरिएन्टेलिस को राजकीय वृक्षों का स्थान दिया है।

चंडीगढ़ तथा लक्ष द्वीप के लिये अभी भी प्रस्तावित नामो कीं अपेक्षा है। साथ ही अपेक्षा है विभिन्न राज्यों द्वारा स्वीकृत राजकीय वृक्षों की घोषणा की जो जन-जन तक पहुँच सके।

राष्ट्रीय वृक्षों की ही भाँति निम्न राजकीय पुष्प भी डा० जैन द्वारा नामित किए गए थे :

तालिका 2 : राष्ट्रीय पुष्प (जैन 1984)

राज्य/केन्द्र शासित प्रदेश	पौधे का नाम	
	प्रचलित नाम	वैज्ञानिक नाम
1, अंदमान एवं निकोबार द्वीप समूह	केया	पैन्डेनस अन्दमानिकस
2. अरुणाचल प्रदेश	द्रौपदीमाला	रिकोस्टाइलिस रिटयूसा
3. असम	चंपा	माइकेलिया चंपाका
4. आन्ध्र प्रदेश	चमेली	जैसमिनम प्यूबेंसस
5. उड़ीसा	अशोक	सराका अशोका
6. उत्तर प्रदेश	ब्रह्म कमल	ससूरिया आववैलाटा
7. कर्नाटक	नंदी वर्धन	एरीएँटामिया कोरोनेरिया
8. केरल	टेची	इक्जोरा काक्सीनिया
9. गुजरात	वर्ना	क्रैटवा नुरवाला
10. जम्मू एवं कश्मीर	ब्लूपापी	मेकोनाप्सिस एक्लिएटा
11. तमिलनाडु	पवालक कुरिंजा	क्रोसेन्ड्रा इनफन्डीबुलीफर्मिस
12. त्रिपुरा	नागकेसर	मेसुआ फेरिया
13. पंजाब	थाब (कोरलट्री)	एरीथ्रिना वेरिगाटा
14. पश्चिम बंगाल	शेफालिका	निक्टेन्थस आरबोरट्रिसटिस
15. गोआ दमन-दीव	वाइल्ड मार्निंग ग्लोरी	आइपोमिया पेसकार्पी
16. दिल्ली	अमलतास	कैसिया फिस्चुला
17. पान्डीचेरी	अपराजिता	क्लिटोरिया टरनेसिया
18. बिहार	कचनार	बाउहीनिया परपूरिया
19. मध्य प्रदेश	स्टरकूलिया	स्टरकूलिया कोलोराटा
20. महाराष्ट्र	जारुल	ल्नैगरस्ट्रोमिया स्पेसियोसा
21. मणिपुर	मनीपुर लिली	लिलियम मैक्लीनी
22. मेघालय	घटक-पादप	नेपेन्थिस खासिआना
23. राजस्थान	करील	कैपेरिस डेसीडुआ
24. नागालैन्ड	ब्लू-वैन्डा	वैन्डा सिरुलिया

25. सिक्किम	नोबिल आर्किड	डेन्ड्रोबियम नोबिले
26. हरियाणा	वसक	एढाटोडा वसाका
27. हिमाचल प्रदेश	हिस, अतीस	एकोनिटम हेटेरोफिलम
28. मिजोरम	चालता	डिलेनिया इन्डिका

राजकीय पुष्पों की इस सूची में भी डा० टी० एन० खुशू ने कुछ परिवर्तन सुझाए। उनके अनुसार गुजरात के लिए अमलास (कैसिया फिस्चुला), दिल्ली के लिए लैगरस्ट्रोमिया इण्डिका, दमन-दीव के स्थान पर गोवा के आइपोनिया पेसकापी. पुष्पों का नाम प्रस्तावित किया गया। इस सूची में लक्षद्वीप, पाण्डीचेरी, दमन-दीव एवं चंडीगढ़ के लिए कोई प्रस्ताव नहीं दिया गया था।

डा० खुशू के अनुसार राष्ट्रीय पुष्प/वृक्ष को किसी पार्टी के चिन्ह आदि के रूप में उपयोग नहीं किया जाना चाहिए। इसके अतिरिक्त इन्हें विभिन्न राज्यों द्वारा स्वीकृत किया जाना है। कुछ राज्यों द्वारा ऐसी स्वीकृति प्रदान भी की जा चुकी है।

*

कुछ इधर की कुछ उधर की

—'इकोफोरम' नामक मासिक पत्रिका की शुरुआत 'दि एनवायरमेन्ट लायेजन सेण्टर इण्टरनेशनल' (ELCI) की तरफ से अंग्रेजी, फ्रेंच एवं स्पैनिश भाषाओं में गई है। सम्पर्क सूत्र : ELCI, पो०बा० 72461, नैरोबी, केन्या।

—सल्फाइड अवक्षेपण के सिद्धान्त पर आधारित एक नई विधि का विकास अन्ना विश्वविद्यालय मद्रास ने प्रदूषित जल से भारी धातुओं के निर्गमन हेतु किया है।

—'जनरल शेरमन' कैलिफोर्निया में पाये जाने वाले विलक्षण वृक्ष का कल्पित नाम है। इस वृक्ष की गोलाई 24.11 मीटर, वजन 2030 टन तथा ऊँचाई 83 मीटर है।

—एक अनुमान के अनुसार भारत की 32.9 करोड़ हेक्टेयर भूमि में से 17.5 करोड़ हेक्टेयर भूमि झूम कृषि, 'खनन कार्य', अत्यधिक चराई (ग्रेजिंग), वायु एवं जल के कटाव तथा लवणीय या क्षारीय होने के कारण अनुत्पादक हो गई है।

—विश्व पर्यावरण दिवस सन् 1972 से प्रत्येक वर्ष 5 जून को मनाया जाता है।

(संकलन : डा० एस० एल० गुप्त)

गुजरात व राजस्थान के संकटग्रस्त पौधे

महेश जयंतीलाल कोठारी

हमारे श्रेष्ठ वैदिक पुराणों में 'ऋषि दधीचि' के नाम का उल्लेख है, जिन्होंने लोक-कल्याण हेतु अपने अंग-प्रत्यंग का बलिदान दिया। परोपकाराय फलंति वृक्षा : संस्कृत उक्ति अनुसार वृक्ष भी प्राणिमात्र के लिये अपना सब कुछ देता है। ऐसे परोपकारी वृक्ष, वनोंको अपने निजी स्वार्थ हेतु अत्यधिक मात्रा में काटने से कई पौधे संकट ग्रस्त, दुर्लभ या लुप्त प्राय हुए हैं। भारत में करीब 15000 पुष्पी पौधे पाये गये हैं। उनमें लगभग 5000 जातियाँ ऐसी हैं जो केवल भारत में ही पाई जाती है। इनमें से 2000 जातियाँ संकट ग्रस्त हैं।

गुजरात एवं राजस्थान के संकट ग्रस्त पौधों के बारे में आज तक बहुत कुछ लिखा गया है। हिन्दी में भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, पर्यावरण विभाग द्वारा प्रकाशित पुस्तक "भारत की वनस्पति" (संकलन व सम्पादन, जैन और मुद्गल—1984) में लेख 'राजस्थान के वन और वनस्पति' (विजेन्द्र सिंह, पृष्ठ 32-38), राष्ट्रीय मरू उद्यान एवं मरुस्थल में पौधों को सुरक्षित रखने की सम्भावनायें (राजेन्द्र पांडे, पृष्ठ 156-163) तथा "गुजरात के वन और वनस्पति" (कोठारी, पृष्ठ 60-63) द्वारा वहाँ पायी जाने वाली साधारण वनस्पतियों के बारे में, पर्यावरण विभाग द्वारा प्रकाशित मैटीरीयल्स फार ए कटलाग आफ थ्रेटेन्ड प्लान्टस आफ इण्डिया (संकलन व सम्पादन, जैन एवं शास्त्री, 1983) में गुजरात और राजस्थान के संकट ग्रस्त पौधों की जानकारी दी गयी है। तदनुसार गुजरात और राजस्थान में करीब 62 पौधे ऐसे हैं जो संकट ग्रस्त, बिरले (दुर्लभ) या लुप्त प्राय हो रहे हैं। भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण द्वारा कार्यान्वित परियोजना स्टडीज सर्वे एण्ड कन्जर्वेशन आफ इण्डेजर्ड स्पीसीज ऑफ फ्लोरा के अन्तर्गत (1981-84) गुजरात एवं राजस्थान के संकटग्रस्त पौधों के लिए विविध वनों में वैयक्तिक अन्वेषण, निरीक्षण, वहाँ के विभिन्न पादपालयों में ऐसे पौधों का अभ्यास एवं प्राप्त साहित्य के माध्यम से पता चलता है कि प्रमुखत: पौधों के अस्तित्व पर खतरा बढ़ती हुई जन-संख्या के कारण लोगों के पुनर्वास हेतु प्राकृतिक वनों को काटने से हुआ है। कई पौधे उनके नैसर्गिक निवास स्थान के नष्ट होने से संकटग्रस्त, बिरले या लुप्त प्राय हो गये हैं। उनकी ऐसी अवस्था के लिये निम्नलिखित कारक उत्तरदायी हैं :—

(अ) जैविक कारक :—

(1) कृषि योग्य वन एवं ईंधन के लिये लकड़ी की अत्यधिक मात्रा में निरंतर कटाई से बांसवाडा क्षेत्र (राजस्थान) जो पहले बांसों के लिये प्रसिद्ध था किन्तु अब बांस विहीन हो गया है। गुजरात के समुद्रतटीय क्षेत्रों में कच्छ वनस्पतियों का अकाल परिस्थिति में ईंधन के लिये अधिक कटाई के कारण उनके विकास एवं अस्तित्व पर खतरा पैदा हुआ है। कुलकर्णी (1959) के अनुसार अकेले सौराष्ट्र (गुजरात) में ही 10,000 से अधिक लोगों का गुजारा मेन्ग्रोव वनस्पति की लकड़ी पर हो रहा है। जिसके कारण कुछ पौधे जैसे ब्रुगईएरा जिम्नोरहीजा (जो गुजरात में केवल नवलखी समुद्रतटीय खाड़ी में अधिक मात्रा में पाया जाता था,

किन्तु हाल ही में गुजरात के मेन्ग्रोव परियोजना के सर्वेक्षण से पता चला है, का या तो नामो-निशान मिट गया है या दुर्लभ हो गया है। ऐसी ही दुर्लभ वनस्पति **ब्रुगइएरा सिलेन्ड्रीका** है, जो उमर गांव की खाड़ी (वलसाड, गुजरात) में सीमित मात्रा में पाई गई है।

(2) अधिक मात्रा में पशुओं द्वारा चरना भी एक ज्वलंत विकट समस्या है, जिससे गुजरात एवं राजस्थान की स्वजात (जंगली) वनस्पतियों पर गम्भीर संकट है। अकेले कच्छ-सौराष्ट्र में रवारिओं के 2500 से अधिक ऊँट केवल मेन्ग्रोव वनस्पति के पर्णफलके घास-चारे पर निर्भर है। भारत में उत्तर-पश्चिम राजस्थान का अति दुर्लभ पौधा **मोन्सोनिआ हिलीओट्रापीओईडीस** पशुओं के चरने के कारण दुर्लभ हो गया है। ऐसी ही हालत, कच्छ में घासोंवाला विस्तार (ग्रास लैण्ड) में पाया गया दुर्लभ पौधा **कन्वोल्पुलस स्टॉकसी** के बारे में है।

(3) अधिक मात्रा में आर्थिक व औषधोपयोगी पौधों का व्यापार की दृष्टि से काटना अन्य कारण है। गुजरात, राजस्थान और महाराष्ट्र में उपलब्ध मुकुल (कोम्मीफेरा वाइटिई) जो गोंद-राल व गुग्गुल (गम रेसिन) का उत्पादक है का राष्ट्रीय व अन्तरराष्ट्रीय व्यापार भी हो रहा है। इसलिए वह संकट ग्रस्त है। ऐसे ही अन्य पौधों में जंगली बैर या वोटी (**जिजीफुस ट्रन्काटा**) को अपने फल और लकड़ियों के लिये काटा जा रहा है। यह पौधा अब तक विश्व में पश्चिम राजस्थान के जोधपुर और बाड़मेर जिलों में ही सीमित क्षेत्रीय (एण्डेमीक) पाया गया है। इसके अलावा "आर्कीड" वनस्पति जैसे— **डेन्ड्रोबियम माईक्रोबल्ब्रोन** (गुजरात के डांगके वनों में दुर्लभ), **सुलोफीआ रामेन्टेसीया** (पंचमहाल, गुजरात) एवं अन्य जातिओं का घर में शोभा के लिये ज्यादा उपयोग से राष्ट्रीय एवं अन्तरराष्ट्रीय व्यापार हो रहा है। जिससे वे दुर्लभ या लुप्त प्रायः हो रहे हैं।

(4) समुद्रतटीय विस्तार में पर्यटक, पर्यटकों की सुविधा के लिये किया गया विकास एवं व्यापार की दृष्टि से बन्दरगाह का विकास व औद्योगिकरण ने भी शाकीय, काष्ट युक्त एवं तृण वर्ग की वनस्पतिओं को क्षति पहुँचाई है। जैसे गुजरात के समुद्री किनारे में उपलब्ध दुर्लभ पौधे **सीपेरस द्वारकेन्सिस, इस्वाईमम सन्तापाउई, पोर्टरेसीआ कोअरक्टाटा**।

(5) शोधकर्ताओं द्वारा वनस्पति अध्ययन संशोधन ने भी कुछ अंशों में रावणताड (**हार्इफीनी डाईकोटोमा**, गुजरात), इफेड्रा फोलीआटा (राजस्थान) जैसी वनस्पतिओं को क्षति पहुंचाई है।

(6) प्राकृतिक वनों में रास्ता बनाने से भी गुजरात (गिरनार, सापुतारा), राजस्थान (आबु, जोधपुर एवं उदयपुर की कुछ पहाड़ियों के पौधों को नुकसान पहुँचा है, जिसके कारण **साईडा त्यागी, ट्रीब्युलस राजस्थानेसीस** जैसी सीमित-क्षेत्रीय वनस्पति दुर्लभ हो गई हैं।

(7) रासायनिक कारक : भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, पश्चिमी परिमण्डल द्वारा हाल ही मे गुजरात में किये गए मेन्ग्रोव सर्वेक्षण से पता चला है कि टाटा केमीकल्स वर्कस लि० (मीठापुर) द्वारा बड़ी पाईप लाईन के जरिये निरंतर द्वारका के समुद्रतटीय राष्ट्रीय उद्यान के करीब रसायनयुक्त गर्मपानी छोड़ने से कई मेन्ग्रोव एवं 'मुकुल' जैसी उपयोगी वनस्पतियों को क्षति पहुँची हैं।

(ब) अजैविक कारकों में प्रमुखतः नैसर्गिक कारकों जैसे—राजस्थान, के कुछ रेगिस्तानी क्षेत्रों में कम वर्षा 150-200 मि. मी.) अधिक तापमान (47°) तेज हवाएँ

(70-70 कि. मी. प्रति घंटा), तेज धूप आदि से पौधों के अस्तित्व या विकास पर असर हुआ है। गुजरात के समुद्र तटीय विस्तार में तूफान व तेज हवा तथा बाढ़ आने से कच्छ मेन्ग्रोव एवं अन्य पौधों को क्षति पहुँचती है। ताप्ती व नर्मदा नदी में बाढ़ आने से उनके किनारे पर पाये गये ब्लुमीया बोवेई, टेफ्रोसिया, जामनगरेन्सिस आदि दुर्लभ पौधों के विकास पर असर हुआ है।

संरक्षण : गुजरात, राजस्थान तथा भारत के अन्य संकटग्रस्त, दुर्लभ व लुप्त प्रायः पौधों को बचाने के लिये पर्यावरण एवं वन विभाग और भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण की ओर से कई प्रयत्न किये गये हैं। दुर्लभ पौधों एवं अन्य जन्तुओं के प्राकृतिक स्थान को बचाने के लिये एवं पर्यावरण की रक्षा हेतु भारत में करीब 44 राष्ट्रीय उद्यान एवं 207 अभयारण्य की स्थापना की गई है।

अतिविषी आर्किड, मुकुल व सर्पगंधा जैसे पौधों एवं गोड़ावण (ग्रेट इण्डियन बस्टर्ड, राजस्थान) मयूर, पलमिन्गो (कच्छ), कालियार हिरण और गिर के सिंह जैसे प्राणी व जंतुओं के अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर व्यापार में अंकुश एवं संरक्षण की दृष्टि से मार्च 1973 में वाशिंगटन में लगभग 80 से अधिक देश के प्रतिनिधियों की उपस्थिति में अंतरराष्ट्रीय व्यापार संधि (कन्वेन्शन ऑन इन्टरनेशनल ट्रेड इन इन्डेजर्ड स्पीशीज आफ वाईल्ड फौना एन्ड फ्लोरा) बनी जो 1975 में कार्यान्वित हुई। पर्यावरण विभाग एवं भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण की ओर से संकटग्रस्त पौधों के लिये खास परियोजना (सर्वे एन्ड कन्जर्वेशन आफ इन्डेन्जर्ड स्पीशीज आफ फ्लोरा) और मैन एन्ड बायोस्फियर की शुरुआत की गई। इन सबके फल-स्वरूप रेडडाटा बुक ऑफ इण्यिन प्लान्टस के चार खण्ड (1984-90) प्रकाशित हुए। जिनमें सभी संकट ग्रस्त वनस्पतियों का वर्णन, चित्र एवं संरक्षण के साथ उपलब्ध हैं। सरकार के साथ-साथ जनता का भी कर्तव्य है कि वृक्षारोपण जैसे कार्यक्रमों तथा संकटग्रस्त एवं अन्य पौधों व जन्तुओं की सुरक्षा हेतु अपना यथासम्भव योगदान दें।

सुभाषित

इतः स्वपिति केशवः कुलमितस्तदीयद्विषाम्,
इतस्च शरणार्थिनः शिखरिणां गणाः शेरते।
इतोऽपि वडवानलः सहसमस्तसंवर्तकैः,
अहो विततमूर्जितं भरसहं च सिन्धोर्वपुः॥

सहनशीलता में समुद्र का उदाहरण अनुपम है। समुद्र में एक तरफ तो भगवान विष्णु शयन करते हैं और दूसरी तरफ अनेक विरोधी दानवगण। एक ओर इन्द्र के वज्र प्रहार से पक्ष कट जाने के भय से शरण में आये हुए पर्वत हैं तो दूसरी ओर प्रलय मचा देने वाले अग्नि समूह के सहित वडवानल विराजमान हैं। समुद्र की सहनशीलता और उदारता कितनी आश्चर्यजनक है। जो सबके आश्रयदाता हैं वे महान् हैं।

[भर्तृहरिकृत 'नीतिशतक' से]

पर्यावरण प्रदूषण

आनन्द कुमार

जल, वायु एवं भूमि पर्यावरण के तीन प्रमुख अंग हैं, जिनका शुद्ध होना हमारे जीवित रहने के लिए नितान्त आवश्यक है। परन्तु अब पर्यावरण प्रदूषण के फलस्वरूप हमें पीने के लिये न तो स्वच्छ जल और न ही श्वसन हेतु शुद्ध वायु तथा कृषि के लिए उपजाऊ भूमि ही उपलब्ध है। आज अन्य विकसित देशों की भांति पर्यावरण प्रदूषण हमारे देश के लिए भी गम्भीर समस्या तथा शोचनीय विषय बन गया है।

हमारे देश के पर्यावरण-ह्रास के मुख्य कारण निम्न-लिखित हैं : जनसंख्या में वृद्धि, उद्योगीकरण तथा वैज्ञानिकीकरण आदि। बढ़ती हुई जनसंख्या के परिणामस्वरूप हमारी प्राकृतिक सम्पदाओं का तीव्रता से ह्रास होता जा रहा है तथा दूसरी ओर बढ़ते उद्योगों, कल-कारखानों और मशीनों के कारण हमारा पर्यावरण दिन प्रतिदिन अस्वास्थ्य-कर होता जा रहा है। उद्योगीकरण की ओर बढ़ते-बढ़ते आज हम इस परिस्थिति में पहुँच गये हैं कि शहरों में क्या ग्रामीण अंचलों में भी पर्यावरण की स्वच्छता पर प्रश्न-चिन्ह लग गया है।

वायु-प्रदूषण कल-कारखानों की चिमनियों से निकले धुएँ, स्वचालित मशीनों, वाहनों एवं घरों में प्रयुक्त ईंधन के दहन के फलस्वरूप निकले धुएँ के वायुमण्डल में फैल जाने आदि कारणों से होता है। इस विषैले धुएँ में विविध प्रकार की हानिकारक गैसें जैसे—सल्फरडाई-आक्साइड, कार्बन-डाई - आक्साइड, कार्बन मोनो आक्साइड, ओजोन, नाइट्रोजन के आक्साइड, हैलोजन यौगिक, अमोनिया, ऐथिलीन, पराक्सीएसीटिल नाइट्रेट आदि मुख्य हैं। वायुमण्डल में कार्बन-डाई-आक्साइड, ओजोन आदि गैसों की मात्रा में वृद्धि के कारण तापमान भी धीरे-धीरे बढ़ रहा है। इन विभिन्न जहरीली गैसों का पौधों एवं जन्तुओं पर अत्यन्त कुप्रभाव पड़ता है। इनसे पौधों में उत्तक क्षति, हरित रोग, प्रकाश संश्लेषण की दर में कमी, पत्तियों, फूलों एवं फलों का असमय झड़ना आदि हानिकारक लक्षण उत्पन्न होते हैं। उपरोक्त वायु-प्रदूषकों के अलावा चूना, सीमेंट, मैगनीशियम, सीसा, निकिल इत्यादि भी पौधों के लिये हानिकारक हैं। वायु-प्रदूषण से मनुष्यों में श्वास रोग, आंखों में जलन, तपेदिक, कैंसर आदि असाध्य रोग हो सकते हैं। भोपाल में यूनियन कार्बाइड कारखाने से रिसी मेथिल आइसो-साइनेट गैस से मनुष्यों, जानवरों तथा पौधों में जो भीषण तबाही हुई है, उससे सारा संसार स्तब्ध रह गया है। वायु-प्रदूषण के निवारण हेतु पौधों की भूमिका अत्यन्त महत्व-पूर्ण है। पौधे वायुमण्डल से कार्बनडाई-आक्साइड (जो मनुष्य श्वसन-क्रिया में विसर्जित करता है) लेकर प्रकाश-संश्लेषण द्वारा अपना भोजन बनाते हैं। अतः हमें वृक्षा-रोपण पर विशेष ध्यान देना चाहिए क्योंकि पौधे वायुमण्डल को शुद्ध रखने के साथ-साथ तापमान नियन्त्रण में भी सहायक हैं।

जल-प्रदूषण का प्रमुख कारण कारखानों से निकले विषाक्त रसायनों तथा कृषि में प्रयुक्त उर्वरकों एवं कीट-नाशकों का पर्याप्त मात्रा में प्रयोग करना है, जो कि बहकर विभिन्न जल-स्रोतों को दूषित करते हैं। इसके अतिरिक्त जल-प्रदूषण नदियों में मैला तथा शव आदि बहाने के

कारण भी होता है। प्रदूषित जल में फ्लोराइड, पारा, कैडमियम, क्रोमियम आदि रसायन तथा असंख्य कीटाणु पाये गये हैं। प्रदूषित जल पीने से पीलिया, पेचिश, त्वचा, नेत्रों आदि के रोग मनुष्यों में महामारी बन फैल रहे हैं। मछलियाँ भी खाने योग्य नहीं रह गयी हैं। राजस्थान का असाध्य 'नारु रोग' भी प्रदूषित जल पीने के कारण होता है। प्रसन्नता की बात है कि हमारी सरकार ने जल-प्रदूषण नियन्त्रण हेतु कई कदम उठाए हैं। आजकल कल-कारखानों से विसर्जित जल के रसायनों को निष्क्रिय करके ही बाहर बहाने की अनुमति दी जा रही है। गंगा के दूषित जल को प्रदूषण-मुक्त करने की विस्तृत योजना का कार्य भी प्रगति पर है।

समुद्री जल भी प्रदूषण की समस्या से अछूता नहीं रह गया है। कभी-कभी तेलवाहक जहाज के उलटने अथवा तेल के कुएँ से तेल दोहन के समय समुद्री सतह पर तेल की पर्त फैल जाती है, जिससे समुद्री जीव-जन्तु मर जाते हैं। इसके अतिरिक्त नाभिकीय तापघरों का कूड़ा-करकट भी समुद्र में फेंका जा रहा है, जिसके कारण समुद्री जल की रेडियोधर्मिता बढ़ गयी है और इसका दुष्प्रभाव समुद्री जीव-जन्तुओं पर पड़ता है।

भूमि भी विभिन्न उर्वरकों, रसायनों, कीटनाशकों आदि के प्रयोग से दूषित हो गयी है। इस प्रदूषित भूमि में उगे फलों, तरकारियों और अनाज के सेवन से विषैले रसायन हमारे शरीर में प्रविष्ट करके विभिन्न रोग उत्पन्न करते हैं। उदाहरण के तौर पर माँ के दूध में डी०डीटी० नामक कीटनाशक की उपस्थिति प्रकाश में आयी है, जिसका कुप्रभाव नवजात शिशु पर पड़ता है। अतः हमें कृषि में प्रयुक्त उर्वरकों एवं कीटनाशकों का प्रयोग सीमित मात्रा में तथा उचित परामर्श के बाद ही करना चाहिए जिससे इनसे होने वाली हानि में कमी हो।

वायु, जल एवं भूमि प्रदूषण के अतिरिक्त ध्वनि-प्रदूषण भी आजकल चर्चा का विषय बना हुआ है। ध्वनि-प्रदूषण मुख्यतया वाहनों एवं कल-कारखानों आदि से उत्पन्न शोर के कारण होता है। इसका हमारे हृदय तथा मस्तिष्क पर हानिकारक प्रभाव है। इसके फलस्वरूप अनिद्रा व उच्च रक्तचाप जैसी बीमारियाँ बढ़ रही हैं; श्रवण-शक्ति पर भी इसका बुरा असर पड़ता है। ध्वनि-प्रदूषण के निवारण हेतु सड़कों एवं घरों के किनारे वृक्ष लगाने चाहिए क्योंकि वृक्ष ध्वनि-प्रदूषण के नियन्त्रण में काफी सहायक सिद्ध हुए हैं। वाहनों में भी ध्वनि-नियन्त्रक यन्त्र लगाने से ध्वनि-प्रदूषण रोकने में काफी सहायता मिलेगी।

भारत सरकार ने प्रदूषण-नियंत्रण हेतु प्रत्येक राज्य में प्रदूषण नियन्त्रण बोर्ड की स्थापना की है, जिनका कार्य केन्द्रीय प्रदूषण नियन्त्रण बोर्ड के अधीन होता है। जनता में भी सरकार ने राष्ट्रीय पर्यावरण जागरुकता अभियान चलाया है। पर्यावरण सम्बन्धी अनेक गोष्ठियों एवं कार्यशालाओं आदि का आयोजन भी समय-समय पर किया जाता है। विद्यालयों में पर्यावरण-शिक्षा की अनिवार्यता पर विशेष बल दिया जा रहा है। पर्यावरण क्षेत्र में महत्वपूर्ण योगदान के लिए सरकार ने पर्यावरण एवं वन-मन्त्रालय की स्थापना की है।

★

विज्ञान और मानवीय मूल्य

नवीन चौधरी

आज सम्पूर्ण मानव जाति के सामने एक विश्वव्यापी समस्या है पर्यावरण प्रदूषण। इस सिलसिले में कुछ बातें हम सबके सामने हैं, जैसे—जनसंख्या की असाधारण वृद्धि, परम्परागत उर्जा संसाधनों का बेहिसाब खर्च, विभिन्न देशों के बीच सैन्यशक्ति (आग्नेय अस्त्रों) की स्पर्धा। विज्ञान और तकनीकी पद्धतियों का कोई स्पष्ट दर्शन नहीं है, संस्कृति और मानवता के लिए इनमें कोई स्थान नहीं है।

हम विज्ञान के सहारे अपने लिए अधिक से अधिक सुख-सुविधाएँ जुटाने में लगे हैं। विश्वविद्यालयों की डिग्री और डिप्लोमा वाले अपने साथ सिर्फ तकनीकी शिक्षा लेकर आते हैं। ये जब अपनी शिक्षा का उपयोग करते हैं तो मानवीय मूल्य नाम की कोई वस्तु इन्हें दिखाई नहीं देती।

इतिहास साक्षी है कि आज तक जितने अनुसंधान-आविष्कार हुए सभी मानव कल्याण की भावना से प्रेरित होकर। उन नियमों को बनाने वाले ज्ञान-क्षुधा से बेचैन लोग थे। गैलिलियो को उनकी ज्ञान क्षुधा का क्या पुरस्कार मिला? विज्ञान को अपना सब कुछ समर्पित करने वाले कुछ लोग अपने समाज से जीवन भर उपेक्षित रहे।

बाद में विज्ञान को अर्थकरी विद्या बना दिया गया। अर्थ के लोभ में वैज्ञानिक उन लोगों की सेवा करने लगे जिनके मन में मानव कल्याण की भावना स्वप्न में भी नहीं आ सकती। यूरोप और अमेरिका में ऐसे वैज्ञानिकों की लम्बी कतारें खड़ी हो गईं। अधिकांश देशों में तकनीकी नीतियों का निर्धारण महत्वाकांक्षी राजनीतिक नेताओं द्वारा होने लगा।

मानवीय मूल्यों के प्रति विज्ञान और तकनीकी पद्धतियों की उदासीनता ने जटिल समस्याएँ खड़ी कर दी हैं। मानव कल्याण की भावना के अभाव में धरती पर सभी जन्तुओं के लिए संकट उत्पन्न हो गया। ऐसी परिस्थिति जिन लोगों के कारण खड़ी हुई उन्होंने अपनी चेतना और सम्वेदनशीलता को तिलांजलि दे दी। उपभोक्ता आंदोलन के कार्यकर्त्ता, पर्यावरणवेत्ता, युद्ध नीति विरोधी लोगों की आवाज को सुनकर भी अनसुनी कर दी जाती है।

कार्बनडाइ-आक्साइड, गन्धक और नाइट्रोजन के विभिन्न घातक आक्साइड, क्लोरोफ्लूरोकार्बन (CFcs) कहाँ से आ रहे हैं यह सभी को अच्छी तरह मालूम है। मोटर गाड़ियों और वायुयानों की कतारें प्रतिदिन अधिक से अधिक लम्बी होती जा रही हैं। नाभिकीय (nuclear), रसायनिक, जैव (biological) आयुधों की भरमार से बुद्ध, ईसामसीह, नानक की आत्माएँ बिलखती होगी।

कवि, दार्शनिक, लेखक या संगीतज्ञ यदि मानवीय मूल्यों को समझते हैं तो इससे कुछ फर्क नहीं पड़ता है। इन्हें अब सिर्फ तमाशा देखना है कि विनाश के बादल किस तरह घिरते हैं, विनाश व सर्वनाश के बादल। अब फिर कोई कवि भूल से नहीं कहेगा—

सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामया।
सर्वेभद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद् दुखभागभवेत्॥

या

आकल्पं कवि नूतनाम्बुदमयी कादाम्बिनी वर्षतु।

यांत्रिक कविता और तकनीकी दर्शन में सुख और निरामय का निरूपण अलग ढंग से हो रहा है।

★

समाचार

सचिव एवं संयुक्त सचिव, भारत सरकार, पर्यावरण और वन मन्त्रालय, नई दिल्ली द्वारा कलकत्ता में 30 जून, 1991 को भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण के कार्यालयों का निरीक्षण किया गया। उन्होने ओद्योगिक अनुभाग, भारतीय संग्रहालय (आई. एस. आई. एम.) एवं केन्द्रीय राष्ट्रीय पादपालय और भारतीय वनस्पति उद्यान आदि का भ्रमण किया। आई. एस. आई. एम. में प्रदर्शित भारतीय पादप संपदा सम्बन्धी नमूनों में उन्होंने गहरी रूचि ली। उनके बारे में विस्तृत जानकारी से वे प्रभावित भी हुए।

इस क्रम में शैवाल, जूट के रेशे, औषधीय पौधे, विभिन्न प्रकार के काठ के नमूने इत्यादि के परिदर्शन में काफी समय देने के बाद उन्होंने जन साधारण को इनकी जानकारी देने के लिए तत्सम्बन्धित वीडियो कैसेट तैयार करने का सुझाव दिया। कैसेट बन जाने पर उनके प्रदर्शन हेतु मन्त्रालय के विभागों व कार्यालयों के सहयोग लेने के भी निर्देश दिये।

भारतीय वनस्पति उद्यान के मुख्य आकर्षण विशाल बटवृक्ष और विशाल कुमुदिनी, लालगृह, काँच घर (जो कैक्टस और सकुलेण्ट्स के लिए बनाया गया है) का अवलोकन करते हुए उन्होंने अनेक प्रश्न किये जिनका सम्बद्ध अधिकारियों ने उत्तर दिया। इस अवलोकन से प्रभावित होने के पश्चात् उन्होंने उद्यान के विकास के लिए महत्वपूर्ण सुझाव भी दिए।

केन्द्रीय राष्ट्रीय पादपालय कार्यालय के वैज्ञानिकों से विचार-विमर्श के बाद उन्होंने (प्ररूप अनुभाग) टाइप-सेक्शन देखा और उसकी प्रशंसा की। राष्ट्रीय पादपालय के आधुनिकीकरण हेतु किये जा रहे प्रयासों की भी उन्होंने समीक्षा की।

हिन्दी दिवस समारोह, 13 व 14 सितम्बर 1990

दि० 13 सितम्बर 1990 को हिन्दी दिवस समारोह डा० उपेन्द्र चन्द्र भट्टाचार्य, संयुक्त निदेशक की अध्यक्षता में हुआ। इस अवसर पर वाद-विवाद व निबन्ध प्रतियोगिता का आयोजन हुआ। कार्यालय के अन्य वरिष्ठ अधिकारियों ने हिन्दी के प्रयोग के सम्बन्ध में अपने विचार व्यक्त करते हुए अधिक तत्परता से राजभाषा सम्बन्धी आदेशों के अनुपालन का संकल्प लेने का आग्रह किया।

दि० 14 सितम्बर 1990 को डा० आर० आर० राव, संयुक्त निदेशक ने समारोह की अध्यक्षता और "वनस्पति वाणी" हिन्दी पत्रिका के प्रवेशांक का विमोचन किया। प्रतियोगिताओं के लिए निर्णायक मण्डल से प्राप्त परिणाम की उन्होंने विधिवत घोषणा की जो निम्नलिखित हैं :—

अहिन्दी भाषी समूह : वाद-विवाद प्रतियोगिता

1—श्री रवीन्द्र नाथ चटर्जी,	प्रथम
2—श्री अरुण कुमार चटर्जी,	द्वितीय
3—श्री सनत कुमार बनर्जी,	तृतीय

हिन्दी भाषी समूह : वाद-विवाद प्रतियोगिता

1—श्री आनन्द कुमार	प्रथम
2—श्री के० आर० गौड़	द्वितीय

अहिन्दी भाषी समूह : निबन्ध प्रतियोगिता

1—श्री रवीन्द्र नाथ चटर्जी	प्रथम
2—श्री अरुण कुमार चटर्जी	द्वितीय
3—श्रीमती जयश्री साहा	तृतीय

हिन्दी भाषी समूह : निबन्ध प्रतियोगिता

1—श्री आनन्द कुमार	प्रथम
2—श्री मिरी राम	द्वितीय

हिन्दी कार्यशाला

दि० 1-2 एवं 5 अगस्त 1991 को आयोजित हिन्दी कार्यशाला का उद्घाटन श्री ए० आर० के० शास्त्री, वैज्ञानिक 'एसई' ने किया। कार्यशाला के समापन समारोह की अध्यक्षता डा० विजय कृष्ण, वैज्ञानिक 'एस. डी.' ने की। कार्यशाला में 18 कर्मचारियों ने उत्साहपूर्वक प्रशिक्षण लिया।

कार्यशाला के दौरान निम्नलिखित व्याख्यान हुए

—राजभाषा अधिनियम व राजभाषा नियम (श्री गोविन्द प्रसाद सारस्वत)
—सामान्य टिप्पण व आलेखन (श्रीमती अंजलि मुखर्जी)
—सरकारी कामकाज में हिन्दी के प्रयोग की दिशा (श्री वागीश दत्त तिवारी)
—विभिन्न पत्राचार के नमूने (श्री नत्थूराम शर्मा)
—हिन्दी वर्णमाला और सरकारी विभागों/कार्यालयों के नाम (श्री नवीन चौधरी)
—हिन्दी वर्णमाला और शब्दों में ध्वनि का महत्व (श्री वागीश दत्त तिवारी)

★

हाइफिनी डाइकोटोमा : भारतीय वनस्पति उद्यान, हावड़ा में भारतीय डोम पाम

कोमीफोरा वाइटी : एक औषधीय पौधा

प्लीओनी ह्यूमिलिस : सिक्किम का एक मनोरम आर्किड

निदेशक, भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, पी-8, ब्रेबोर्न रोड, कलकत्ता-700 001 द्वारा प्रकाशित
तथा अरुण प्रिंटिंग प्रेस, 9-बी, सिकदरपारा स्ट्रीट, कलकत्ता-7 (फोन : 38-4201) द्वारा मुद्रित ।